भारतीय अतीत की बातें

- विकास आयुक्त, उत्तर प्रदेश
- शिक्षा प्रसार अधिकारी उत्तर प्रदेश
- पुस्तकालय अधीक्षक, बिहार एवं
- समाज शिक्षा निदेशक, राजस्थान

द्वारा स्वीकृत

☆

कालिदास कपूर

एम० ए०, एल० टी०

अवकाश प्राप्त प्रिंसिपल, कालीचरण इण्टर कालेज, लखनऊ

भूतपूर्व सदस्य, बोर्ड आफ हाई स्कूल एंड इण्टरमीडिएट एजुकेशन, उ०प्र०

☆

रामा प्रकाशन

नजीराबाद, लखनऊ

भूमिका

शिक्षा-प्रसार में बालोपयोगी साहित्य का घनिष्ठ सहयोग आवश्यक है। बच्चों के शिक्षित मातापिता तथा अन्य स्वजन उनकी वर्षगांठ पर अब उन्हें कुछ भेंटें देने लगे हैं, तो इन शुभ अवसरों पर बच्चों के हाथ में मिठाई के अतिरिक्त ऐसा उपहार भी देना चाहिए जिससे उनका मनोरंजन हो और ज्ञानवर्द्धन भी।

नौ-दस वर्ष की अवस्था तक पहुँचने पर बच्चे छपी भेंट से आनन्द और ज्ञान प्राप्त करने योग्य हो जाते हैं।

इस अवस्था से ही उन्हें नागरिकता के प्रथम पाठ मिल जायें, अपने देश के इतिहास की जानकारी हो जाय, विज्ञान-सागर की झलक मिल जाय और अंतर्राष्ट्रीय सौहार्द्र की भावना भी उनमें जाग्रत हो। यों बालोपहार के लिए चार पुस्तिकाओं का संग्रह बनता है।

बाबा की बातें बच्चों को नागरिकता के प्रथम पाठ पढ़ाती है;

भारतीय अतीत की बातें उन्हें स्वदेश के इतिहास से परिचित कराती हैं;

विज्ञान के विकास की बातें में उन्हें विज्ञान के विकास की झलक मिलती है; और चौथी पुस्तक।

देश देश के सखा-सहेली से मैत्री प्रारम्भ करते हैं; पंचशील के प्रथम पाठ प्राप्त करते हैं। यों मनोरंजन के साथ उनकी भावनात्मक तथा ज्ञानात्मक शिक्षा भी होती है।

बालोपहार की चारों पुस्तिकाएँ आकर्षक कार्ड-बोर्ड कवर में ८-१२ वर्ष के बच्चों को अपनी किसी भी वर्ष-गांठ में भेंट-स्वरूप मिलें और इस अवस्था से ही उनका पुस्तक-प्रेम विकास-शील हो - यही लेखक तथा प्रकाशक की शुभाकांक्षा है।

विषय-सूची

१.	भारत	९
२.	गौरवमय अतीत के साक्षी	११
३.	मोहन जोदड़ो	१४
४.	आदि पुरखे	१७
५.	रामायण और महाभारत	१९
६.	क्रांतिदर्शी कृष्ण	२८
७.	महावीर और बुद्ध	३१
८.	अशोक और कनिष्क	३७
९.	विक्रमादित्य और कालिदास	४१
१०.	विशाल भारत	४५
११.	राजपूतों की देन	४९
१२.	इस्लाम की देन	५२
१३.	संत और कवि	५८
१४.	मुगल दशाह	६६
१५.	शिवाजी और मराठे	७५
१६.	अंग्रेजों के चंगुल में	७९
१७.	स्वाधीनता की ओर	८२
१८.	कविवर रवीन्द्र और महात्मा गांधी	८५
१९.	भारतीय स्वाधीनता के प्रतीक	९१

रत

कहानियाँ सुनना चाहते हो ? मुझे बहुत सी कहानियाँ याद हैं। कहानियाँ झूठी होती हैं, कुछ सच्ची। मुझे सच्ची कहानियाँ ही हैं। झूठी कहानियाँ रोचक होती हैं, तो सच्ची कहानियाँ भी रोचक नहीं।

राजा-रानी की कई कहानियाँ सुनी होंगी। जिस देश में ये ा-रानी रहे उसकी भी कहानी है। यह कहानी ऐसी है कि उसे जितनी छोटी कर दो, चाहे जितनी बड़ी। छोटे हो तो छोटी नी ही कहूँगा। बड़े होने पर इसी देश की बड़ी कहानी पढ़ना।

जिस देश में ये राजा-रानी रहे उसी देश में जन्मे हो, तुम्हारे ा-पिता और बाबा भी जन्मे हैं। राम, कृष्ण और गांधी के शुभ नाम ुने होंगे। ये सब तुम्हारे पुरखे रहे। ये भी इसी देश में जन्मे। देश की कहानी में हमारे सभी पुरखों की कहानियाँ हैं।

जैसे तुम्हारा नाम है वैसे ही इस देश का नाम है। इसे भारत हैं। यह नाम कैसे पड़ा ?

बहुत पुरानी बात है। तब यहाँ रेल नहीं थी, बिजली के तार थे, महल नहीं थे, मोटरें नहीं थीं। परन्तु हिमालय था, गंगा थीं, ा थीं। अब सरस्वती तो पुस्तकों में ही मिलती हैं। तब यह नदी प में थीं।

हिन्दी में 'आर्य' नामक एक शब्द है। 'आर्य' का अर्थ है 'बड़ा'।

कहलाते थे। अब तो हमारा देश स्वतंत्र है। परन्तु जब तुम्हारे माता-पिता पैदा हुए थे तब इस देश पर अंग्रेजों का राज था। ये अंग्रेज भारत से बहुत दूर सात समुद्र पार इंग्लिस्तान नामक देश में रहते हैं। अंग्रेज भी आर्यों को अपने पुरखे मानते हैं। हमारे आर्य पुरखे वास्तव में बड़े थे।

इन्हीं में हमारे भरत नामक एक पुरखा हुए। आर्य बड़े आनंदी थे। सूर्य के दर्शन से, आकाश के बादलों से घिरने पर, आँधी, बिजली और वर्षा के दृश्य देख कर वे मग्न होते और गीत गाने लगते। ये गीत एक ग्रंथ में अब पढ़ने को मिलते हैं जिसे ऋग्वेद कहते हैं। इन गीतों का उच्चारण आज भी वही है जो तब था। इसलिए सभी विद्वान कहते हैं कि ऋग्वेद में भारत की ही नहीं, संसार की आदि वाणी का संग्रह है।

इसी ऋग्वेद में आर्यों के एक युद्ध की कहानी है। इस युद्ध में भरत की विजय हुई। वह राजा मान लिये गये और उनका देश भारत कहा जाने लगा। यों हमारे देश का नाम भारत हुआ।

आर्य बड़े थे तो उनका देश भी बड़ा है। मीलों में इसकी लम्बाई-चौड़ाई बता दूं तो समझ में नहीं आयेगा। यों समझो कि यदि इसके उत्तरी छोर से दक्षिणी छोर तक पैदल यात्रा करने की बात सोचो और प्रति दिन १० मील चलो तो यात्रा में ६ महीने से अधिक लगेंगे। इस यात्रा में बर्फ से ढके पहाड़ मिलेंगे, लहलहाती खेती के बड़े-बड़े मैदान, रेगिस्तान और हरे-भरे जंगल भी मिलेंगे, ठंढ मिलेगी, गर्मी भी मिलेगी, सभी मेल के फूल देखने को, सभी मेल के अन्न, फल और मेवे खाने को मिलेंगे।

भारत के स्वतंत्र होने पर शासन के लिए देश के दो भाग हो गये हैं। परन्तु मुझे पूरे भारत की ही बातें बतानी हैं।

गौरवमय अतीत के साक्षी

बातें बताने के पहले तुम्हें विश्वास दिलाना है कि भारत की सच्ची बातें ही बताऊँगा।

तुम्हारी पाठशाला में जन्मोत्सव की कुछ छुट्टियाँ होती हैं। रामनवमी पर राम के जन्मोत्सव की छुट्टी होती है। कृष्णजन्माष्टमी के दिन कृष्ण-जन्म मनाया जाता है। बुद्ध के मानने वाले चीन-जापान तक हैं। परन्तु वह पैदा हुए थे भारत में और भारत के उत्तर प्रदेश में। अतएव वैशाख शुक्ल पूर्णिमा के दिन बुद्ध का जन्मोत्सव मनाया जाता है। एक ओर बुद्ध ने बौद्ध धर्म का प्रचार किया, दूसरी ओर उन्हीं के समय में महावीर ने जैन धर्म का प्रचार किया। इनकी जन्मतिथि दिवाली की दूज के दिन मनाई जाती है। भारत में हिन्दू, बौद्ध और जैन ही नहीं बसे हैं। यहाँ ईसाई और मुसलमान भी बसे हैं। ईसा की जन्म-तिथि जिस दिन मनाई जाती है उसे बड़ा दिन कहते हैं, यद्यपि वह दिन वर्ष का सबसे छोटा दिन होता है। मुसलमानों के पैगंबर मोहम्मद साहब की जन्म-तिथि बारावफात के नाम से मनाई जाती है।

ये दोनों महापुरुष महात्मा ईसा और पैगंबर मोहम्मद हमारे पुरखे नहीं थे। परन्तु हम इनकी स्मृति का भी आदर करते हैं, क्योंकि बहुत से भारतीय इन्हें मानते हैं।

मुसलमानों और हिन्दुओं में मेल कराने के लिए गुरु नानक ने जन्म लिया। उनकी गद्दी के अंतिम गुरु गोविन्द सिंह थे। इन

कहलाते थे। अब तो हमारा देश स्वतंत्र है। परन्तु जब तुम्हारे माता-पिता पैदा हुए थे तब इस देश पर अंग्रेजों का राज था। ये अंग्रेज भारत से बहुत दूर सात समुद्र पार इंग्लिस्तान नामक देश में रहते हैं। अंग्रेज भी आर्यों को अपने पुरखे मानते हैं। हमारे आर्य पुरखे वास्तव में बड़े थे।

इन्हीं में हमारे भरत नामक एक पुरखा हुए। आर्य बड़े आनंदी थे। सूर्य के दर्शन से, आकाश के बादलों से घिरने पर, आँधी, बिजली और वर्षा के दृश्य देख कर वे मग्न होते और गीत गाने लगते। ये गीत एक ग्रंथ में अब पढ़ने को मिलते हैं जिसे ऋग्वेद कहते हैं। इन गीतों का उच्चारण आज भी वही है जो तब था। इसलिए सभी विद्वान कहते हैं कि ऋग्वेद में भारत की ही नहीं, संसार की आदि वाणी का संग्रह है।

इसी ऋग्वेद में आर्यों के एक युद्ध की कहानी है। इस युद्ध में भरत की विजय हुई। वह राजा मान लिये गये और उनका देश भारत कहा जाने लगा। यों हमारे देश का नाम भारत हुआ।

आर्य बड़े थे तो उनका देश भी बड़ा है। मीलों में इसकी लम्बाई-चौड़ाई बता दूं तो समझ में नहीं आयेगा। यों समझो कि यदि इसके उत्तरी छोर से दक्षिणी छोर तक पैदल यात्रा करने की बात सोचो और प्रति दिन १० मील चलो तो यात्रा में ६ महीने से अधिक लगेंगे। इस यात्रा में बर्फ से ढके पहाड़ मिलेंगे, लहलहाती खेती के बड़े-बड़े मैदान, रेगिस्तान और हरे-भरे जंगल भी मिलेंगे, ठंढ मिलेगी, गर्मी भी मिलेगी, सभी मेल के फूल देखने को, सभी मेल के अन्न, फल और मेवे खाने को मिलेंगे।

भारत के स्वतंत्र होने पर शासन के लिए देश के दो भाग हो गये हैं। परन्तु मुझे पूरे भारत की ही बातें बतानी हैं।

गौरवमय अतीत के साक्षी

बातें बताने के पहले तुम्हें विश्वास दिलाना है कि भारत की सच्ची बातें ही बताऊँगा।

तुम्हारी पाठशाला में जन्मोत्सव की कुछ छुट्टियाँ होती हैं। रामनवमी पर राम के जन्मोत्सव की छुट्टी होती है। कृष्णजन्माष्टमी के दिन कृष्ण-जन्म मनाया जाता है। बुद्ध के मानने वाले चीन-जापान तक हैं। परन्तु वह पैदा हुए थे भारत में और भारत के उत्तर प्रदेश में। अतएव वैशाख शुक्ल पूर्णिमा के दिन बुद्ध का जन्मोत्सव मनाया जाता है। एक ओर बुद्ध ने बौद्ध धर्म का प्रचार किया, दूसरी ओर उन्हीं के समय में महावीर ने जैन धर्म का प्रचार किया। इनकी जन्मतिथि दिवाली की दूज के दिन मनाई जाती है। भारत में हिन्दू, बौद्ध और जैन ही नहीं बसे हैं। यहाँ ईसाई और मुसलमान भी बसे हैं। ईसा की जन्म-तिथि जिस दिन मनाई जाती है उसे बड़ा दिन कहते हैं, यद्यपि वह दिन वर्ष का सबसे छोटा दिन होता है। मुसलमानों के पैगंबर मोहम्मद साहब की जन्म-तिथि बारावफात के नाम से मनाई जाती है।

ये दोनों महापुरुष महात्मा ईसा और पैगंबर मोहम्मद हमारे पुरखे नहीं थे। परन्तु हम इनकी स्मृति का भी आदर करते हैं, क्योंकि बहुत से भारतीय इन्हें मानते हैं।

मुसलमानों और हिन्दुओं में मेल कराने के लिए गुरु नानक ने जन्म लिया। उनकी गद्दी के अंतिम गुरु गोविन्द सिंह थे। इन

कहलाते थे। अब तो हमारा देश स्वतंत्र है। परन्तु जब तुम्हारे माता-पिता पैदा हुए थे तब इस देश पर अंग्रेजों का राज था। ये अंग्रेज भारत से बहुत दूर सात समुद्र पार इंग्लिस्तान नामक देश में रहते हैं। अंग्रेज भी आर्यों को अपने पुरखे मानते हैं। हमारे आर्य पुरखे वास्तव में बड़े थे।

इन्हीं में हमारे भरत नामक एक पुरखा हुए। आर्य बड़े आनंदी थे। सूर्य के दर्शन से, आकाश के बादलों से घिरने पर, आँधी, बिजली और वर्षा के दृश्य देख कर वे मग्न होते और गीत गाने लगते। ये गीत एक ग्रंथ में अब पढ़ने को मिलते हैं जिसे ऋग्वेद कहते हैं। इन गीतों का उच्चारण आज भी वही है जो तब था। इसलिए सभी विद्वान कहते हैं कि ऋग्वेद में भारत की ही नहीं, संसार की आदि वाणी का संग्रह है।

इसी ऋग्वेद में आर्यों के एक युद्ध की कहानी है। इस युद्ध में भरत की विजय हुई। वह राजा मान लिये गये और उनका देश भारत कहा जाने लगा। यों हमारे देश का नाम भारत हुआ।

आर्य बड़े थे तो उनका देश भी बड़ा है। मीलों में इसकी लम्बाई-चौड़ाई बता दूं तो समझ में नहीं आयेगा। यों समझो कि यदि इसके उत्तरी छोर से दक्षिणी छोर तक पैदल यात्रा करने की बात सोचो और प्रति दिन १० मील चलो तो यात्रा में ६ महीने से अधिक लगेंगे। इस यात्रा में बर्फ से ढके पहाड़ मिलेंगे, लहलहाती खेती के बड़े-बड़े मैदान, रेगिस्तान और हरे-भरे जंगल भी मिलेंगे, ठंढ मिलेगी, गर्मी भी मिलेगी, सभी मेल के फूल देखने को, सभी मेल के अन्न, फल और मेवे खाने को मिलेंगे।

भारत के स्वतंत्र होने पर शासन के लिए देश के दो भाग हो गये हैं। परन्तु मुझे पूरे भारत की ही बातें बतानी हैं।

भारत--अतीत के साक्षी

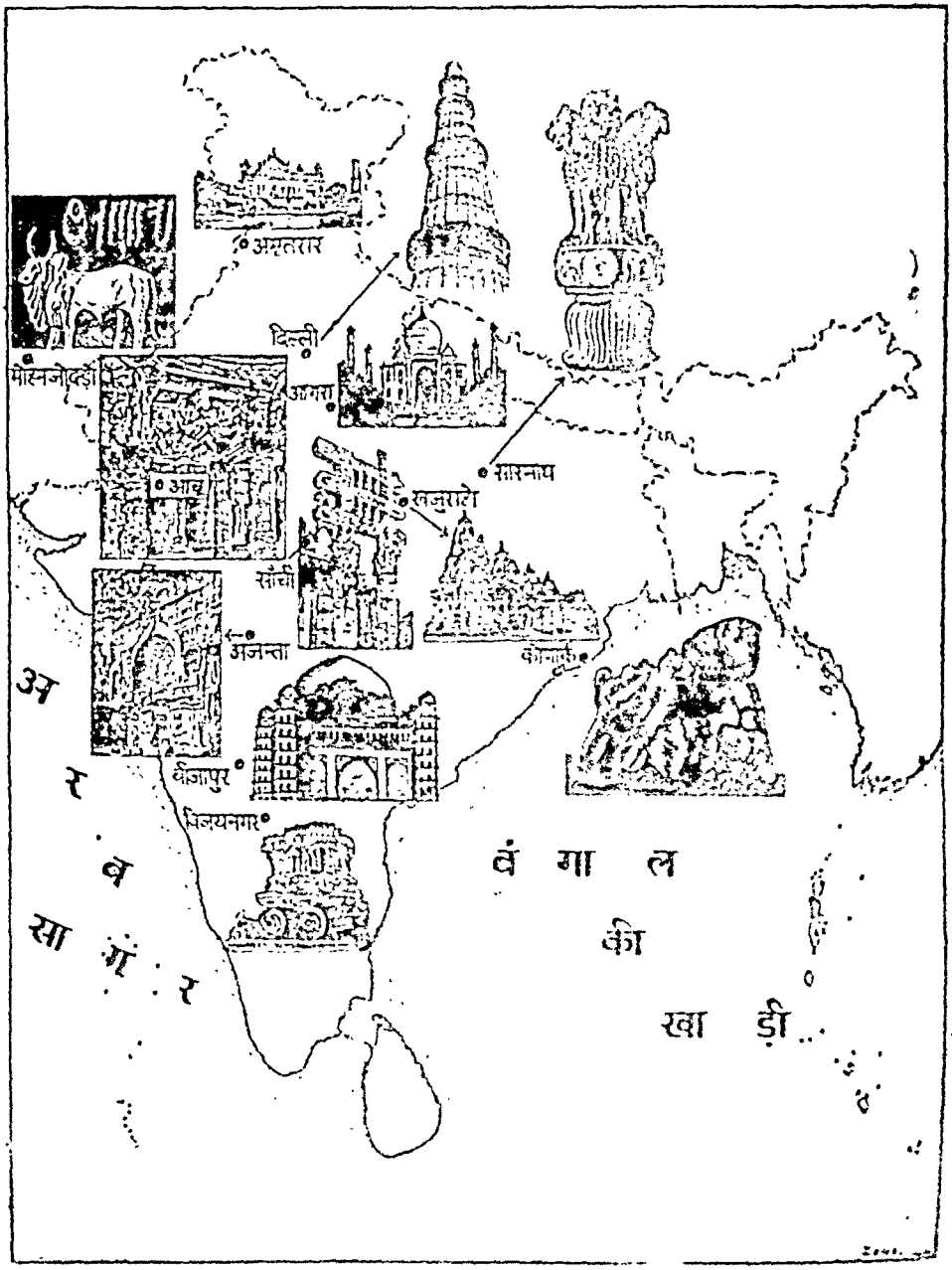
अमृतसर
दिल्ली
मोहनजोदड़ो
आगरा
आबू
सारनाथ
खजुराहो
सांची
अजन्ता
कोणार्क
बीजापुर
विजयनगर
अ
र
ब
सा
गं
र
बं गा ल
की
खा ड़ी

महात्माओं की जन्म-तिथियों पर पाठशालाओं में छुट्टी होती है। तुलसीदास का स्मरण करने के लिए हम तुलसी-जयंती मनाते हैं। अभी तक इसकी छुट्टी नहीं होती।

महात्मा गांधी को तुम्हारे माता-पिता और बाबा ने देखा होगा। तुम्हें उनका आशीर्वाद प्राप्त है। उन्होंने भारत को स्वतंत्र कराया और संसार की जनता तक कृष्ण और बुद्ध के अहिंसा तथा सत्य के संदेश पहुँचाये। इनकी जन्म-तिथि २ अक्तूबर को मनाते हैं।

जन्म-तिथियाँ तो हम थोड़ी-सी ही मनाते हैं। परन्तु भारत में जो बड़े-बड़े लोग हुए हैं उनके बनाये कुछ महल, मंदिर, मकबरे हमें देखने को मिलते हैं। ये सब हमारे भारत के गौरवमय अतीत के साक्षी हैं। सिंध में सिंधु नदी के निकट मोहनजोदड़ो में एक बहुत पुराने नगर के खंडहर हैं। फिर अशोक के बनाये खंभे और स्तूप भारत के कई भागों में हैं। महाराष्ट्र में औरंगाबाद के निकट अजंता के गुफा-मंदिर हैं, झाँसी जिले के देवगढ़ में गुप्त सम्राटों का बनवाया सुन्दर विष्णु मंदिर है। इसके अतिरिक्त राजपूत राजाओं के बनाये उत्तरी भारत और दक्षिण में बड़े-बड़े दुर्ग, महल और मंदिर हैं। राजपूत राजाओं के बाद सुल्तानों और बादशाहों की बारी आई। उन्होंने सुन्दर मसजिदें और मकबरे, महल और किले बनवाये। जिस प्रकार अकबर और शाहजहाँ की याद हमें दिल्ली, आगरा और फतेहपुर सीकरी में आती है, उसी प्रकार पूना में शिवाजी और मराठा पेशवाओं के स्मारक हमें देखने को मिलते हैं। मराठों के बाद भारत में अंग्रेजों का राज हुआ। प्रायः सभी नगरों में इन अंग्रेजों के राज का कोई न कोई स्मारक है। कलकत्ते का विक्टोरिया मेमोरियल भारत में अंग्रेजी राज का सबसे बड़ा स्मारक है।

यों जन्मोत्सव की छुट्टियाँ और पुरखों के बनाये भवन भारत के गौरवमय अतीत के दो बड़े साक्षी हैं।

भारत--अतीत के साक्षी

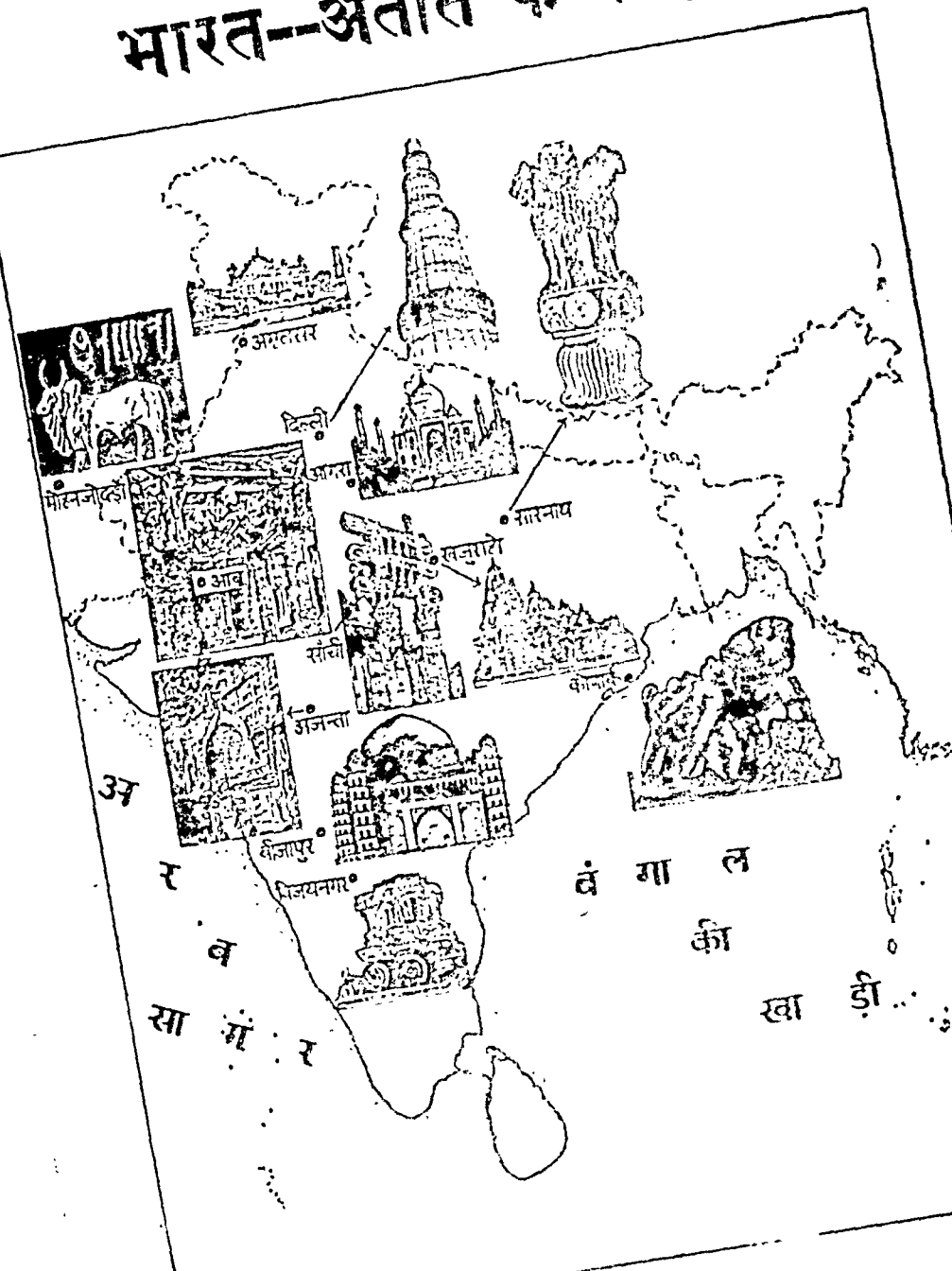
अमृतसर
दिल्ली
आगरा
मोहनजोदड़ो
सारनाथ
खजुराहो
आबू
सांची
कोणार्क
अजन्ता
बीजापुर
विजयनगर
अ
र
ब
सा
गं
र
बं
गा
ल
की
खा
ड़ी

३

मोहनजोदड़ो

भारत में कई बड़े-बड़े नगर हैं। इनके नाम नकशों में दिये हुए हैं। इनमें बहुत-से लोग रहते हैं और बहुत-से लोग इन्हें देखने जाते हैं।

इन नगरों के अतिरिक्त देश में नगरों के खंडहर भी हैं। किसी समय ये नगर थे, यहाँ चहल-पहल रहती थी। किसी कारण ये नगर उजड़ गये। अब उन्हीं लोगों को इन खंडहरों के देखने का शौक है जो भारत की कहानी सुनना या सुनाना चाहते हैं। इन खंडहरों में सबसे पुराने खंडहर की ही कहानी तुम्हें सुना दूँ।

पाकिस्तान में सिंध प्रांत है। इस प्रांत में सिंधु नदी के किनारे लरकाना नामक एक जिला है। इस जिले में एक टीला दिखाई देता था जिसे लोग मोहनजोदड़ो कहते थे।

कुछ लोगों की समझ में आया कि इस टीले के नीचे एक नगर दबा पड़ा है। उसे खोदने पर उनका अनुमान सही निकला। वहाँ जो भवन मिले और उनमें जो सामान मिला उनके सहारे विद्वानों ने कहानी बनाई। यह कहानी इस प्रकार है:—

अब से पाँच हजार वर्ष पहले की बात है। तब भारत में कोई नगर न थे, रेल और तार बहुत दूर, सड़कें तक न थीं, खेती भी कहीं-कहीं नाममात्र की थी। उस समय सिंधु नदी के किनारे एक नगर बसा हुआ था जहाँ के निवासियों ने पक्के मकान बनाये थे। मकानों के साथ बावलियाँ बनवाई थीं जिनमें स्त्री-पुरुष नहाते थे।

आदि पुरखे

४

मोहनजोदड़ो की बात कर चुका हूँ। इस नगर के निवासियों को हम अपने पुरखे नहीं मानते। मोहनजोदड़ो के उत्तर, पंजाब में आर्य बसे थे। आर्यों ने इन्हें जीत लिया, धीरे-धीरे एक ओर सिंध में बस गये और दूसरी ओर उत्तर-प्रदेश तथा बिहार तक। फिर तो इनका प्रभुत्व भारत के सभी निवासियों ने मान लिया।

इन आर्यों के नेता ऋषि कहलाते थे। हिन्दू अपने को किसी न किसी ऋषि की संतान मानते हैं। किसी हिन्दू से पूछिए, तुम्हारा क्या गोत्र है ? तो कोई वासिष्ठ गोत्र का है, कोई कौशिक गोत्र का, कोई अंगिरस गोत्र का। ये सब आर्य ऋषि थे। यों गोत्री बनकर हिन्दू ऋषि को ही अपने पुरखे मानते हैं।

जोदड़ो में पाया गया है। यों यह सच है कि सूती कपड़े की कहानी भारत से ही प्रारंभ हुई। हमारे पुरखों ही ने सबसे पहले कपास बोई, सबसे पहले सूती कपड़ा स्वयं पहना और उस समय की जनता को पहनाया।

मोहनजोदड़ो क्यों नष्ट हुआ, यह पहेली अभी तक बूझी नहीं जा सकी है। मोहनजोदड़ो के निवासी व्यापार-कुशल थे, पर रण-कुशल न थे। अतएव किसी समय वे युद्ध में हार गये और हारने के कारण ही नष्ट हुए। किसी समाज के जीवित रहने के लिए उसका शक्तिशाली होना आवश्यक है।

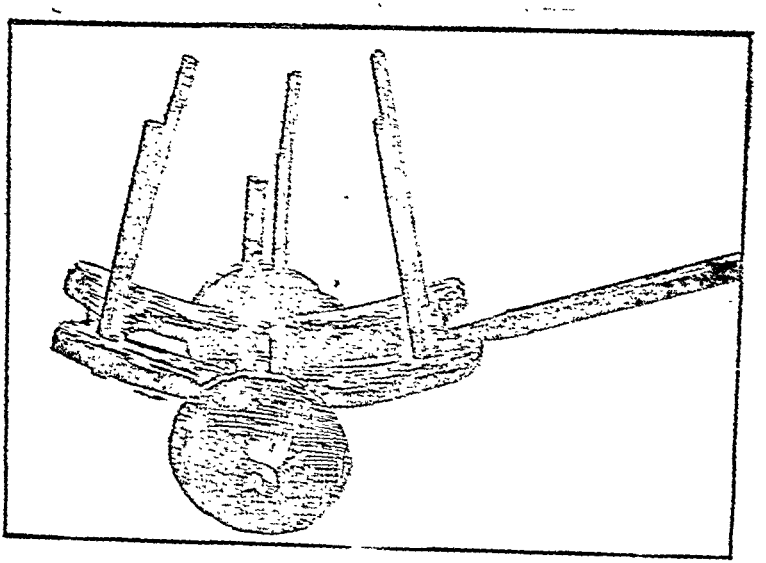

मोहनजोदड़ो में प्राप्त एक बैलगाड़ी

ने क्षत्री होकर उनसे बढ़ कर स्वाध्याय किया। याज्ञवल्क्य जनक की तारीफ सुन कर उनसे मिले। शास्त्रार्थ करने पर वह हार गये और जनक को उन्होंने अपना गुरु मान लिया। उनसे ब्रह्म-विद्या सीख कर वह अपने समय के बहुत बड़े विद्वान हो गये। एक बार जनक ने यज्ञ किया। इस यज्ञ के सम्बन्ध में उन्होंने विद्वानों की बड़ी सभा की और सूचना दी कि सभा में शास्त्रार्थ होगा और हजार गायें तथा दस हजार गिन्नियाँ इनाम में दी जायँगी। याज्ञवल्क्य ने सभा में पहुँचते ही अपने शिष्यों को आज्ञा दी कि पारितोषिक की गायें और मुहरें ले चलो। फिर क्या था, शास्त्रार्थ शुरू हो गया। इस शास्त्रार्थ में गार्गी नाम की एक विदुषी ने भी भाग लिया। याज्ञवल्क्य विजयी हुए। आगे चलकर यही याज्ञवल्क्य यजुर्वेद के रचयिता हुए।

आर्यों के वन्य आश्रम का एक चित्र

याज्ञवल्क्य का आदरणीय जीवन-चरित्र विद्यार्थियों के लिए आदर्श है।

रामायण और महाभारत

५

हमारे पुरखे कहानी सुनने-सुनाने के बहुत शौकीन थे। प्राचीन आर्यों में जो वीर और वीरांगनाएँ हुईं उनके यश की गाथाएँ लेकर कवि वाल्मीकि ने रामायण की रचना की और महर्षि वेदव्यास ने महाभारत का संकलन किया।

हमारे साहित्य में रामायण और महाभारत से बड़ी कोई कहानी नहीं है। ये कहानियाँ क्या हैं कहानियों के खजाने हैं। महाभारत की गाथाएँ लेकर सैकड़ों कहानियाँ, काव्य और नाटक भारत और विदेश की सभी भाषाओं में लिखे गये हैं।

वाल्मीकि ने रामायण संस्कृत में लिखी। इसी रामायण के आधार पर तुलसीदास ने हिन्दी में रामचरितमानस लिखा। रामचरितमानस की गिनती संसार के महाकाव्यों में है। इसे पढ़ कर बालक, जवान, बूढ़े सभी आनंदित होते हैं। रामचरितमानस पढ़ना प्रारंभ कर दो। कथा इस प्रकार है :—

उत्तर प्रदेश के उस भाग पर जो अवध कहलाता है, किसी समय सूर्यवंशी राजा रघु का राज था। कई पीढ़ियों बाद इस वंश में दशरथ राजा हुए। इनकी राजधानी अयोध्या थी।

दशरथ ने विवाह तो तीन किये, परन्तु उनके संतान कोई नहीं हुई। तब उन्होंने यज्ञ किया जिसके प्रसाद में उनकी तीन रानियों से चार पुत्र हुए ; कौशल्या से राम, कैकेई से भरत, सुमित्रा से लक्ष्मण और शत्रुघ्न। चारो भाइयों ने बड़े होकर धनुर्विद्या सीखी। उस

य देश में जंगल बहुत थे और इन जंगलों में हिंसक पशु
धक थे। राम ने अपने भाइयों सहित इन हिंसक पशुओं को मा
या। तब ऋषिगण कुटियाँ बनाकर इन जंगलों में शांतिपूर्व
हने लगे।

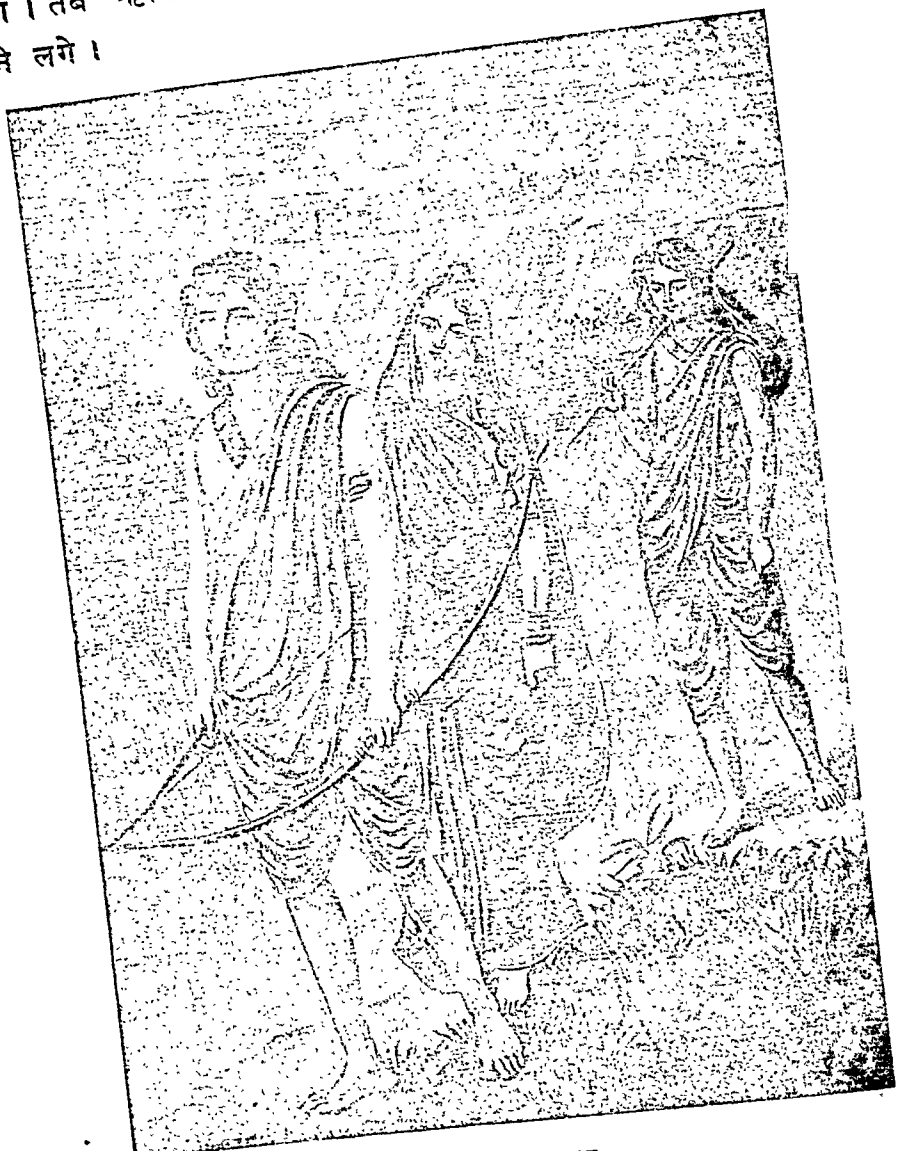

राम वन गमन

अवध राज्य के पूर्व और उसके पड़ोस उत्तरी विहार में राजा जनक का मिथिला राज्य था। जनक ने अपनी कन्या जानकी के लिए स्वयंवर किया। उनके पास शिवजी का एक बहुत भारी और पुराना धनुष था। जनक ने घोषणा की, "जो इस धनुष पर प्रत्यंचा चढ़ा देगा उसे जानकी व्याह दी जायगी।" राम ही इस प्रतियोगिता में सफल हुए। अतएव जानकी उनके साथ व्याह दी गईं। राम के तीनों भाई भी अपनी-अपनी बहुएँ लिये ही अयोध्या पहुँचे।

अब दशरथ बूढ़े हो चले थे। उन्होंने निश्चय किया कि राम को राजतिलक करके हम राजकाज उन्हें सुपुर्द कर दें और स्वयं भगवान के ध्यान में लगें।

दशरथ की रानियों में कैकेयी सबसे तेज थी और दशरथ इस रानी से दबते भी थे। अतएव जब कैकेयी को राम के राजतिलक की खबर लगी तो वह मुँह फुलाकर बैठ गई। दशरथ मनाने गये तो कैकेयी ने उनसे वचन लिया और आज्ञा निकलवा दी कि उस से जन्मे भरत को राजगद्दी मिलेगी और राम १४ वर्ष तक राज्य के बाहर रहें।

दशरथ ने आज्ञा तो निकाल दी; परन्तु उन्हें अपने किये पर बहुत पछतावा हुआ। राम ने आज्ञा सुनी तो वनवास के लिए तुरंत तैयार हो गये। सीता ने कहा, "मैं भी चलूँगी।" लक्ष्मण भी साथ हो लिये। बहुत से लोगों ने राम को समझाया कि दशरथ सठिया गये हैं, जनता तुम्हें ही चाहती है। परंतु राम ने कहा कि जो आज्ञा पिता की निकल गई, वह तो अब मानूँगा ही। यों राम, सीता और लक्ष्मण को लिये, अयोध्या की जनता को रोते छोड़, विदा हुए।

दशरथ पुत्र के विछोह में मर गये। भरत अपनी ननिहाल में थे। उन्हें खबर पहुँची तो वह आये। पहले पिता के दाहकर्म

य देश में जंगल बहुत थे और इन जंगलों में हिंसक पशु
धिक थे। राम ने अपने भाइयों सहित इन हिंसक पशुओं को मार
या। तब ऋषिगण कुटियाँ बनाकर इन जंगलों में शांतिपूर्वक
हने लगे।

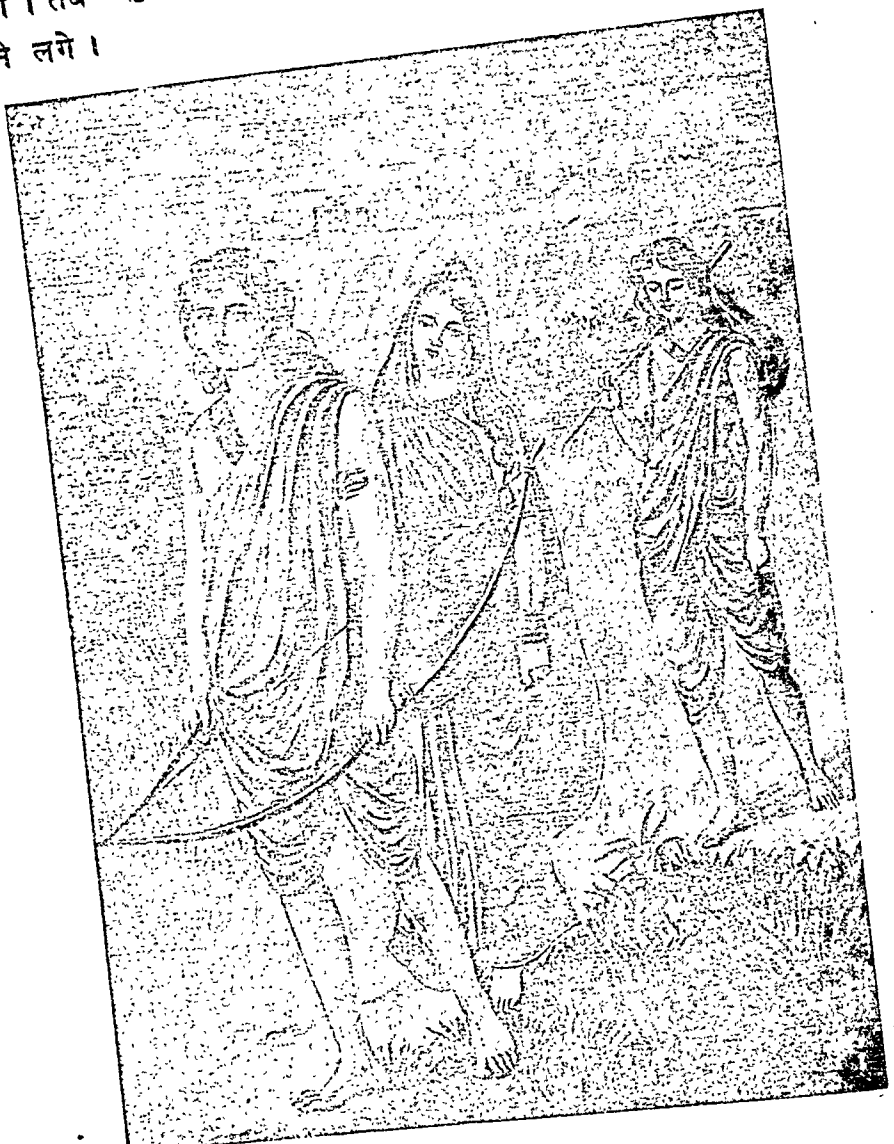

राम वन गमन

रावण की लड़ाई हुई। इसमें रावण हारा और मारा गया। राम ने रावण के छोटे भाई विभीषण को लंका का राज दिया और सीता, लक्ष्मण तथा हनुमान को साथ लिये १४ वर्ष की अवधि पूरी कर के अयोध्या पहुँचे। यहाँ भरत ने उनका हार्दिक स्वागत किया। राम राजगद्दी पर बैठे। जब तक जीवित रहे तब तक उन्होंने प्रजा को इतना सुखी किया कि लोग अब आदर्श शासन को राम-राज्य कहते हैं।

१४ वर्ष की अवधि के बाद लौटने पर भरत ने राम का हार्दिक स्वागत किया।

राम ने इस प्रकार दिग्विजय से आर्य-मर्यादा दक्षिण तक पहुँचाई और आदर्श गृहस्थ तथा राजा हो कर उन्होंने आर्य मर्यादा भारत में घर-घर प्रतिष्ठित की। अतएव मर्यादा-पुरुषोत्तम होकर राम घर-घर पुजने लगे।

महाभारत की कथा रामायण की कथा से लम्बी है।

उत्तर-प्रदेश में जहाँ आजकल मेरठ का जिला है वहाँ किसी समय हस्तिनापुर का राज्य था। अयोध्या के राजा सूर्यवंशी थे तो हस्तिनापुर के राजा चंद्रवंशी थे। हस्तिनापुर की गद्दी पर शांतनु नामक राजा हुए। इन शांतनु के भीष्म नामक एक पुत्र था। पुत्र

से निवृत्त हुए। फिर अयोध्या के बड़े-बड़े लोगों को साथ लिये राम को अयोध्या लौटने लिए मनाने चले। भरत ने राम से बहुत अनुनय-विनय की। परन्तु राम अपनी प्रतिज्ञा पर अटल रहे।

भरत आदर्श छोटे भाई थे। लौट कर राजगद्दी पर उन्होंने राम की खड़ाऊँ रख दी। उनकी ओर से राजकाज करते रहे और भाई के लौटने की बाट जोहने लगे।

सीता-स्वयंवर में लंका का राजा रावण मौजूद था। वही सीता से ब्याह करना चाहता था, परंतु प्रतियोगिता में राम ही जीते थे। अतएव सीता उन्हें ब्याह दी गई थीं। वनवास होने पर राम ऋषियों-मुनियों से मिलते-जुलते राज्य के बाहर दक्षिण की ओर बढ़ते चले गये।

सीता और लक्ष्मण साथ थे। रावण सीता की ताक में रहा। एक बार राम शिकार पर गये थे, लक्ष्मण उन्हें ढूँढ़ने निकल गये थे और सीता अकेली रह गई थीं। मौका पाकर रावण उन्हें उठा ले गया।

अब राम और लक्ष्मण को सीता के खोजने की फिक्र हुई। जिस वन में ये दोनों थे वहाँ अनार्य बालि का राज था, यद्यपि राज पर हक उसके भाई सुग्रीव का था। बालि रावण का मित्र था। अतएव राम ने सुग्रीव से मिल कर बालि को मार दिया। सुग्रीव राजा हुए और सबने मिलकर हनुमान को सीता की खोज में भेजा। हनुमान लंका पहुँचे, सीता से मिले, रावण को समझाया कि राम से बिगाड़ न करो, सीता को लौटा दो। परंतु रावण ने एक न सुनी।

हनुमान ने लौट कर राम को खबर दी। अब राम, लक्ष्मण और हनुमान ने वानरों की सेना लेकर वहाँ से समुद्र पार किया जहाँ आजकल रामेश्वरम् का मंदिर है और लंका पहुँचे। राम और

विचित्रवीर्य निस्संतान मरे। चित्रवीर्य पांडु और धृतराष्ट्र को छोड़ कर मरे। पांडु को गद्दी मिली। उनके पाँच पुत्र थे—युधिष्ठिर, अर्जुन, भीम, नकुल और सहदेव। ये पुत्र बालक ही थे कि पांडु मर गये। तब उनके अंधे भाई धृतराष्ट्र गद्दी पर बैठे और निश्चय हुआ कि धृतराष्ट्र के बाद पांडवों के बड़े होने पर इन्हें ही राजगद्दी मिले।

धृतराष्ट्र के भी कई पुत्र थे। इनमें सबसे बड़ा दुर्योधन था। बड़े होकर उसने हठ किया कि पांडवों को राज्य का अधिकार न मिले। उसने उनका नाश करने के भी कई जतन किये, परन्तु पांडव बचते रहे। झगड़ा समाप्त करने के लिए धृतराष्ट्र ने अपने राज्य का दक्षिणी भाग पांडवों को दे दिया और इन्होंने इन्द्रप्रस्थ नगर बसाया जहाँ आजकल दिल्ली है।

युधिष्ठिर थे बहुत सच्चे, परन्तु जुए की उनमें लत थी। दुर्योधन ने जुए में युधिष्ठिर को फाँस लिया। युधिष्ठिर अपना राज हार गये। पाँचों भाइयों ने मिलकर पांचाल राज्य के राजा द्रुपद की लड़की द्रौपदी से विवाह किया था। युधिष्ठिर द्रौपदी को भी दाँव पर लगाकर हार गये।

अब दुर्योधन को बदला लेने का मौका मिला। पांडव १२ वर्ष के लिए राज्य से निकाले गये; परंतु यह निश्चय हुआ कि वापस आने पर उन्हें उनके राज्य का हिस्सा मिल जाय। जब वे वापस आये तो दुर्योधन ने राज्य वापस करने से इंकार किया।

अब कहानी में कृष्ण की बात कहनी है। कृष्ण का राज्य गुजरात में था जहाँ द्वारिका उनकी राजधानी थी। परन्तु यह मथुरा में अपने मामा कंस के जेलखाने में पैदा हुए थे जहां उसने इनके पिता वसुदेव और माता देवकी को बंद कर रखा था।

महाभारत का सबसे बढ़िया अंश वह है जिसमें भीष्म के उपदेश हैं। दोनों दलों ने उनके उपदेश सुने।

भीष्म पर हिन्दू जनता की कितनी श्रद्धा है, यह इस बात से प्रकट है कि सभी हिंदुओं ने भीष्म को पितामह मान लिया है और तर्पण में सभी हिन्दू उन्हें जल देते हैं।

महाभारत में पांडु जीते और कौरव हारे। परंतु जीत कर भी पांडव राज्य का सुख नहीं भोग सके। महासमर के परिणामस्वरूप अनेक कष्ट जिस प्रकार हम भोग रहे हैं, उसी प्रकार महाभारत के फलस्वरूप प्रजा को अनेक कष्ट भोगने पड़े, जिससे व्यथित होकर पांडव हिमालय पर गलने चले गये। इसी प्रकार कृष्ण के राज्य में यादवों का गृहकलह में सर्वनाश हुआ और वह भी स्वर्गवासी हुए।

रामायण और महाभारत की कथा यहाँ बहुत संक्षेप से कही गई है। बाल-रामायण पढ़ो, बाल-महाभारत पढ़ो। फिर बड़े होकर दोनों ग्रंथों को असली रूप में पढ़ो। इनमें हमारे देश की संस्कृति की बहुत बड़ी निधि है।

—

का यह अंश कवियों को बहुत रुचा। सैकड़ों संतों और कवियों ने कृष्ण-लीला के जो गीत गाये हैं उनमें उन्हें कृष्ण के जीवन का वही भाग संगीतमय जँचा जो उन्होंने व्रज के गोप-गोपियों के मध्य

कुरुक्षेत्र पर कृष्ण-अर्जुन संवाद

बिताया था। इन गीतों के कारण कृष्ण ने जनता के हृदय में घर कर लिया है।

कृष्ण के सुदामा नामक एक साथी थे। लड़कपन में दोनों एक पाठशाला में पढ़ते थे। दोनों की हैसियत गरीबी की थी। समय पाकर कृष्ण राजा होगये और सुनहरे महल में रहने लगे, परंतु सुदामा पहले से भी अधिक निर्धन हो गये। जब सुदामा बहुत दुखी हुए तो उनकी स्त्री ने उन्हें कृष्ण के पास भेजा। फिर कृष्ण ने सुदामा का कितना आदर किया तथा धन-धान्य से पूर्ण कर दिया, इसकी कथा भी बहुत रोचक है।

कृष्ण ने महाभारत में कितना बड़ा काम किया और अर्जुन को गीता के द्वारा कितना ऊँचा उपदेश दिया, इसकी बात की जाचुकी है।

यों क्रांतिदर्शी कृष्ण ने भारतीय जनता के हृदय में वैसा ही घर किया जैसा मर्यादा पुरुषोत्तम राम ने। करोड़ों भारतीयों के चरित्र भारत के इन अवतारी महापुरुषों के जीवन-चरित्र से प्रभावित होते हैं।

महावीर और बुद्ध

७

बिहार में मुजफ्फरपुर के निकट बसाढ़ नामक एक गाँव है। प्राचीन काल में वहाँ वैशाली नामक नगर था। इसी वैशाली में वर्धमान का जन्म हुआ। बड़े हो कर वर्धमान पार्श्वनाथ स्वामी के संघ के सदस्य हुए। परंतु अधिक समय तक संघ में नहीं रहे। बारह वर्ष तक नंगे रहकर तपस्या करते रहे। बयालीस वर्ष की अवस्था में वह 'निर्ग्रंथ' हुए। उन्होंने सच्चा ज्ञान प्राप्त किया और जिन, केवलिन अथवा महावीर की उपाधि से प्रसिद्ध हुए। फिर ३० वर्ष तक जगह-जगह घूम कर धर्म प्रचार करते रहे।

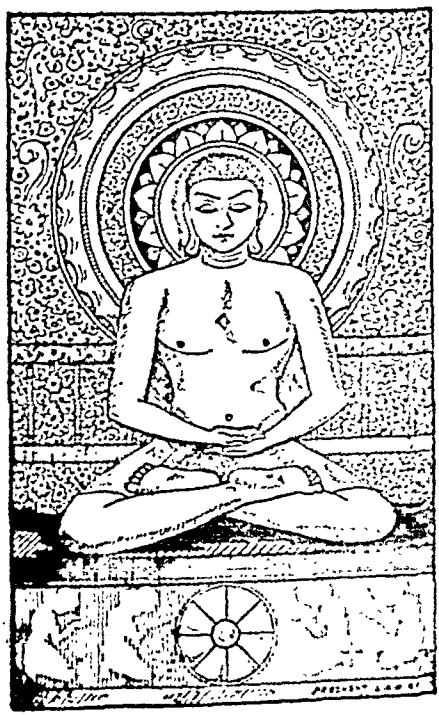

भगवान् महावीर

महावीर के अनुयायी जैन कहलाते हैं। उनका विश्वास है कि श्रद्धा, ज्ञान, तप और शुद्ध जीवन द्वारा ही जीवन-मरण से मुक्ति मिल सकती है। अहिंसा को परमधर्म मानते हैं। भारत के बाहर नहीं हैं।

इसी काल में एक दूसरे महात्मा गौतम बुद्ध अपने धर्म का प्रचार कर रहे थे। इनके उपदेशों का प्रचार संसार के सभी देशों तक पहुँचा। नेपाल और उत्तर प्रदेश के डाँडे पर गोरखपुर के उत्तर शक्य वंश के क्षत्री राज करते थे। उनकी राजधानी कपिलवस्तु थी। राजा का नाम शुद्धोदन था। इन्हीं शुद्धोदन के घर गौतम बुद्ध ने सिद्धार्थ के नाम से जन्म लिया। यह बात आज से लगभग ढाई हजार वर्ष पहले की है।

जहाँ उनका जन्म हुआ वहाँ आगे चलकर बौद्ध धर्म के सबसे बड़े भक्त अशोक ने एक खंभा खड़ा किया जो अभी तक वर्तमान है और बौद्ध उसके दर्शन करने जाते हैं।

सिद्धार्थ ने लड़कपन में बहुत अच्छी शिक्षा पाई। उन्होंने पढ़ना-लिखना सीखा, तीर चलाना भी सीखा।

सिद्धार्थ के लिए खेल के सभी सामान थे, परंतु वह खेल के शौकीन न थे। दुःख के दृश्य देखकर यह सोचने लग जाते थे कि इस दुःख का कारण क्या है। जवान होने पर उनका विवाह हो गया। परंतु उनका सोच-विचार में पड़ना कम न हुआ।

एक बार उन्होंने एक बाज को कबूतर कर झपटते देखा। उसकी हत्या होते देख उनका हृदय भर आया। अपने अनुचरों के साथ घूमने निकले। मार्ग में एक बूढ़े अपाहिज को मरते देखा। गौतम ने अपने अनुचरों से पूछा, 'हम सबका क्या योंही अंत होना है?' अनुचरों ने कहा, 'राजकुमार जी, हम सब को मरना है।'

अब गौतम विचार करने लगे कि संसार के कष्टों से मुक्ति किस प्रकार मिले। इसी सोच-विचार में रहे कि एक पुत्र के पिता भी हो गये। उनकी समझ में आया कि अब घर में रहे तो माया में

फंसे रहेंगे। तब वह एक रात बिना किसी को खबर दिये घोड़े पर सवार होकर एक नौकर के साथ महल से निकले। नगर के बाहर आकर उन्होंने अपने आभूषण नौकर को दिये, घोड़े की रास उसे पकड़ाई और पैदल वन की ओर चल दिये।

पहले तो ब्राह्मणों के पास बैठकर उन्होंने शास्त्र समझे। उनके सामने समस्या थी कि किस प्रकार मनुष्य को कष्ट से छुटकारा मिले, 'निर्वाण' मिले। शास्त्रों में उन्हें अपने प्रश्न का उत्तर नहीं मिला। उस समय ज्ञान प्राप्त करने के लिए तपस्या का फैशन था। अतएव उन्होंने तपस्या की, सूखकर काँटा हो गये। परंतु उन्हें अपने प्रश्न का उत्तर नहीं मिला। एक रात पीपल के पेड़ के नीचे बैठ कर उन्होंने सोचना शुरू किया। आधी रात को उन्हें अपने प्रश्न का उत्तर मिला, उन्हें बुद्धि मिली। अब वह बुद्ध हो गए। आजकल काशी बड़े-बड़े पंडितों का केन्द्र है। उस समय भी वह पंडितों का केन्द्र था। वहाँ पहुँच कर काशी के निकट सारनाथ नामक स्थान पर बुद्ध ने अपना पहला 'प्रवचन' दिया। यहीं से उनके मानने वाले बनने प्रारंभ हुए जो अपने को बौद्ध कहने लगे। इस कारण बौद्ध सारनाथ को अपना एक बहुत बड़ा तीर्थ मानते हैं।

बुद्ध ने अपने धर्म का प्रचार करने के लिए अपने पक्के मानने वालों का एक संघ बनाया जो घरबार छोड़कर प्रचार के काम में ही लगे रहें। इस संघ के सदस्य भिक्षु कहलाते थे। हमारे देश में चार महीने बरसात के होते हैं। उस समय रेलें, सड़कें और पुल नहीं थे। तब लोग जाड़े और गर्मी के आठ महीने तो घूम सकते थे, परंतु बरसात में उन्हें घर पर ही रहना पड़ता था। उस समय छपाई नहीं थी, समाचार-पत्र नहीं थे, रेडियो भी नहीं था।

इसी काल में एक दूसरे महात्मा गौतम बुद्ध अपने धर्म का प्रचार कर रहे थे। इनके उपदेशों का प्रचार संसार के सभी देशों तक पहुँचा। नेपाल और उत्तर प्रदेश के डाँडे पर गोरखपुर के उत्तर शक्य वंश के क्षत्री राज करते थे। उनकी राजधानी कपिलवस्तु थी। राजा का नाम शुद्धोदन था। इन्हीं शुद्धोदन के घर गौतम बुद्ध ने सिद्धार्थ के नाम से जन्म लिया। यह बात आज से लगभग ढाई हजार वर्ष पहले की है।

जहाँ उनका जन्म हुआ वहाँ आगे चलकर बौद्ध धर्म के सबसे बड़े भक्त अशोक ने एक खंभा खड़ा किया जो अभी तक वर्तमान है और बौद्ध उसके दर्शन करने जाते हैं।

सिद्धार्थ ने लड़कपन में बहुत अच्छी शिक्षा पाई। उन्होंने पढ़ना-लिखना सीखा, तीर चलाना भी सीखा।

सिद्धार्थ के लिए खेल के सभी सामान थे, परंतु वह खेल के शौकीन न थे। दुःख के दृश्य देखकर यह सोचने लग जाते थे कि इस दुःख का कारण क्या है। जवान होने पर उनका विवाह हो गया। परंतु उनका सोच-विचार में पड़ना कम न हुआ।

एक बार उन्होंने एक बाज को कबूतर कर झपटते देखा। उसकी हत्या होते देख उनका हृदय भर आया। अपने अनुचरों के साथ घूमने निकले। मार्ग में एक बूढ़े अपाहिज को मरते देखा। गौतम ने अपने अनुचरों से पूछा, 'हम सबका क्या योंही अंत होना है?' अनुचरों ने कहा, 'राजकुमार जी, हम सब को मरना है।'

अब गौतम विचार करने लगे कि संसार के कष्टों से मुक्ति किस प्रकार मिले। इसी सोच-विचार में रहे कि एक पुत्र के पिता भी हो गये। उनकी समझ में आया कि अब घर में रहे तो माया में

अशोक और कनिष्क ८

राम की चर्चा हो चुकी है। राम ने रावण को हराया अवश्य, परंतु उन्होंने अवध से लंका तक कोई एक-छत्र राज्य नहीं कायम किया।

गौतम बुद्ध की भी चर्चा हो चुकी है। उनके समय में भारत के पश्चिम ईरानियों ने सिंधु नदी से मिस्र तक एक बहुत बड़ा राज्य बनाया। फिर यूनान के राजा सिकन्दर ने उतना ही बड़ा राज्य यूनान से सिंधु नदी तक बनाया। उसके मरने पर उसका राज्य टूट गया और मौर्य वंशी चंद्रगुप्त को भारत पर पहला एक-छत्र राज्य कायम करने का मौका मिला।

अशोक चंद्रगुप्त मौर्य का पोता था। अशोक ने सम्राट होकर कलिंग देश पर आक्रमण किया जो आजकल उड़ीसा कहलाता है। उसने कलिंग जीत तो लिया, परन्तु लड़ाई में लाखों सैनिक मारे गये।

ऐसे समय अशोक का संपर्क उपगुप्त नामक एक बौद्ध भिक्षु से हुआ। उपगुप्त के उपदेश से वह इतना प्रभावित हुआ कि कलिंग-युद्ध की हत्याओं पर उसे घोर दुख हुआ। वह बौद्ध धर्म में दीक्षित हुआ और जिस लगन से अपने साम्राज्य के बढ़ाने की धुन में था, उसी लगन से वह बौद्ध धर्म के प्रचार में जुट गया।

अशोक ने बहुत-से विहार और स्तूप बनवाये, सड़कें बनवाईं,

इधर भारत में वैदिक धर्म के मानने वालों ने बौद्ध धर्म की बहुत-सी बातें अपना ली, जैसे अहिंसा और मूर्ति-पूजा। अपने नये रूप में वह बौद्ध धर्म से अधिक जनप्रिय हो गया। यों भारत में बौद्ध धर्म के मानने वाले कम हो गये। फिर भारत के पश्चिम यूनान और मिस्र तक ईसाई और इस्लाम धर्म का जोर बढ़ा और हिंदेशिया में भी इस्लाम का प्रचार हुआ। यों इन देशों से भी बौद्ध धर्म की जड़ उखड़ी। परंतु सिंहल, बर्मा, स्याम, चीन और जापान में बौद्ध धर्म की जड़ इतनी दृढ़ हो गई थी कि वहाँ के निवासी अभी तक बौद्ध हैं। जैसे मुसलमानों के प्रधान तीर्थ अरब में हैं, वैसे बौद्धों के प्रधान तीर्थ उत्तर देश और बिहार में हैं जहाँ गौतम जन्मे, 'बुद्ध' पद प्राप्त किया, प्रवचन दिये, निर्वाण प्राप्त किया।

अशोक के मरने के बाद मौर्य राज्य छिन्न-भिन्न हो गया। परन्तु बौद्ध धर्म उन्नति करता रहा।

अशोक की राजधानी पटना थी। उसके लगभग ३०० वर्ष बाद भारत में कनिष्क नामक सम्राट हुआ जिसकी राजधानी पुरुषपुर में थी जिसे अब पेशावर कहते हैं। कनिष्क का राज्य भारत में तो पूर्व की ओर वाराणसी तक ही था। परन्तु पश्चिम में अफगानिस्तान और तुर्किस्तान उसके राज्य के भीतर थे, जिस कारण उसके राज्य का डाँडा चीन के राज्य से मिलता था।

अशोक की भाँति कनिष्क भी बौद्ध धर्म का भक्त था। काश्मीर उसके राज्य के भीतर था। वहाँ उसने बौद्धों की एक सभा कराई जिसमें उसने बौद्धों के उस मत की व्यवस्था कराई जिसे महायान कहते हैं। व्यवस्था के बाद बहुत से बौद्ध भिक्षुओं ने चीन की यात्रा की। वहाँ उनके उपदेश से चीनी जनता इतनी प्रभावित हुई कि बहुत शीघ्र चीनी बौद्ध हो गये। फिर कनिष्क के लगभग चार सौ वर्ष बाद चीनियों ने बौद्ध धर्म कोरिया तक पहुँचाया जहाँ से बौद्ध भिक्षु जापान पहुँचे और वहाँ भी बौद्ध धर्म का प्रचार हुआ।

सिक्के पर कनिष्क का अंकित चित्र

बुद्ध ने निर्वाण के लिए जन-सेवा पर ही जोर दिया था।

उनके किनारे धर्मशाले बनवाये। उसने जीव-हत्या कम कराने का भी प्रयत्न किया।

अशोक ने जनता में सदाचार का प्रचार किया। उसने अपने विशाल साम्राज्य में ऐसे स्थानों पर जहाँ मेले लगा करते थे, खंभों और शिलाओं पर अपनी आज्ञाएँ और उपदेश लिखवा दिये। फिर उसने धर्म-महामात्र नाम के कर्मचारी भी नियुक्त किये जो सदाचार और धर्म के संबंध में जनता पर निगरानी रखते थे।

इस प्रकार अशोक ने भारतीय जनता को सदाचार और बौद्ध धर्म की ओर प्रवृत्त किया।

अशोक ने भारत के बाहर भी बौद्ध धर्म का प्रचार किया। उसने बौद्ध भिक्षु यूनान और मिस्र तक भेजे जिन्होंने बुद्ध के संदेश वहाँ तक पहुँचाये। इसने पुत्र महेंद्र और पुत्री संघमित्रा को सिंहल भेजकर वहाँ बौद्ध धर्म का प्रचार कराया। मध्यप्रदेश की राजधानी भूपाल के निकट साँची नामक एक स्टेशन है। उसके पास एक बौद्ध स्तूप है। इस स्तूप के चारों ओर पत्थर का बहुत सुन्दर कोट है। इस कोट के एक फाटक पर अशोक के सिंहल को महेंद्र और संघमित्रा के साथ बोधि-वृक्ष भेजने का सुन्दर दृश्य अंकित है।

अशोक ने बुद्ध के जन्म-स्थान कपिलवस्तु की यात्रा की और मार्ग पर उसने कई स्तंभ लगवाये। ये सब अशोक की तीर्थ-यात्रा के स्मारक हैं।

संसार में बड़े-बड़े सम्राट हुए हैं जिन्होंने बड़े-बड़े राज्यों पर राज्य किया, बहुत सी लड़ाइयाँ जीतीं। परन्तु अशोक की सी धर्म-विजय किसी से नहीं बनी। उसके सुयश तक कोई सम्राट नहीं पहुँचता। स्वतंत्र भारत में अशोक की स्मृति का जो मान हुआ है, वह उचित ही है।

अशोक के मरने के बाद मौर्य राज्य छिन्न-भिन्न हो गया। परन्तु बौद्ध धर्म उन्नति करता रहा।

अशोक की राजधानी पटना थी। उसके लगभग ३०० वर्ष बाद भारत में कनिष्क नामक सम्राट हुआ जिसकी राजधानी पुरुषपुर में थी जिसे अब पेशावर कहते हैं। कनिष्क का राज्य भारत में तो पूर्व की ओर वाराणसी तक ही था। परन्तु पश्चिम में अफगानिस्तान और तुर्किस्तान उसके राज्य के भीतर थे, जिस कारण उसके राज्य का डाँडा चीन के राज्य से मिलता था।

अशोक की भाँति कनिष्क भी बौद्ध धर्म का भक्त था। काश्मीर उसके राज्य के भीतर था। वहाँ उसने बौद्धों की एक सभा कराई जिसमें उसने बौद्धों के उस मत की व्यवस्था कराई जिसे महायान कहते हैं। व्यवस्था के बाद बहुत से बौद्ध भिक्षुओं ने चीन की यात्रा की। वहाँ उनके उपदेश से चीनी जनता इतनी प्रभावित हुई कि बहुत शीघ्र चीनी बौद्ध हो गये। फिर कनिष्क के लगभग चार सौ वर्ष बाद चीनियों ने बौद्ध धर्म कोरिया तक पहुँचाया जहाँ से बौद्ध भिक्षु जापान पहुँचे और वहाँ भी बौद्ध धर्म का प्रचार हुआ।

सिक्के पर कनिष्क का अंकित चित्र

बुद्ध ने निर्वाण के लिए जन-सेवा पर ही जोर दिया था।

उनके किनारे धर्मशाले बनवाये। उसने जीव-हत्या कम कराने का भी प्रयत्न किया।

अशोक ने जनता में सदाचार का प्रचार किया। उसने अपने विशाल साम्राज्य में ऐसे स्थानों पर जहाँ मेले लगा करते थे, खंभों और शिलाओं पर अपनी आज्ञाएँ और उपदेश लिखवा दिये। फिर उसने धर्म-महामात्त नाम के कर्मचारी भी नियुक्त किये जो सदाचार और धर्म के संबंध में जनता पर निगरानी रखते थे।

इस प्रकार अशोक ने भारतीय जनता को सदाचार और बौद्ध धर्म की ओर प्रवृत्त किया।

अशोक ने भारत के बाहर भी बौद्ध धर्म का प्रचार किया। उसने बौद्ध भिक्षु यूनान और मिस्र तक भेजे जिन्होंने बुद्ध के संदेश वहाँ तक पहुँचाये। इसने पुत्र महेंद्र और पुत्री संघमित्रा को सिंहल भेजकर वहाँ बौद्ध धर्म का प्रचार कराया। मध्यप्रदेश की राजधानी भूपाल के निकट साँची नामक एक स्टेशन है। उसके पास एक बौद्ध स्तूप है। इस स्तूप के चारों ओर पत्थर का बहुत सुन्दर कोट है। इस कोट के एक फाटक पर अशोक के सिंहल को महेंद्र और संघमित्रा के साथ बोधि-वृक्ष भेजने का सुन्दर दृश्य अंकित है।

अशोक ने बुद्ध के जन्म-स्थान कपिलवस्तु की यात्रा की और मार्ग पर उसने कई स्तंभ लगवाये। ये सब अशोक की तीर्थ-यात्रा के स्मारक हैं।

संसार में बड़े-बड़े सम्राट हुए हैं जिन्होंने बड़े-बड़े राज्यों पर राज्य किया, बहुत सी लड़ाइयाँ जीतीं। परन्तु अशोक की सी धर्म-विजय किसी से नहीं बनी। उसके सुयश तक कोई सम्राट नहीं पहुँचता। स्वतंत्र भारत में अशोक की स्मृति का जो मान हुआ है, वह उचित ही है।

अशोक के मरने के बाद मौर्य राज्य छिन्न-भिन्न हो गया। परन्तु बौद्ध धर्म उन्नति करता रहा।

अशोक की राजधानी पटना थी। उसके लगभग ३०० वर्ष बाद भारत में कनिष्क नामक सम्राट हुआ जिसकी राजधानी पुरुषपुर में थी जिसे अब पेशावर कहते हैं। कनिष्क का राज्य भारत में तो पूर्व की ओर वाराणसी तक ही था। परन्तु पश्चिम में अफगानिस्तान और तुर्किस्तान उसके राज्य के भीतर थे, जिस कारण उसके राज्य का डाँडा चीन के राज्य से मिलता था।

अशोक की भाँति कनिष्क भी बौद्ध धर्म का भक्त था। काश्मीर उसके राज्य के भीतर था। वहाँ उसने बौद्धों की एक सभा कराई जिसमें उसने बौद्धों के उस मत की व्यवस्था कराई जिसे महायान कहते हैं। व्यवस्था के बाद बहुत से बौद्ध भिक्षुओं ने चीन की यात्रा की। वहाँ उनके उपदेश से चीनी जनता इतनी प्रभावित हुई कि बहुत शीघ्र चीनी बौद्ध हो गये। फिर कनिष्क के लगभग चार सौ वर्ष बाद चीनियों ने बौद्ध धर्म कोरिया तक पहुँचाया जहाँ से बौद्ध भिक्षु जापान पहुँचे और वहाँ भी बौद्ध धर्म का प्रचार हुआ।

सिक्के पर कनिष्क का अंकित चित्र

बुद्ध ने निर्वाण के लिए जन-सेवा पर ही जोर दिया था।

शिक्षा और चिकित्सा ही जन- सेवा के मुख्य अंग हैं। अतएव जहाँ-जहाँ बौद्ध धर्म पहुँचा, वहाँ शिक्षा और चिकित्सा ने उन्नति की। चरक आयुर्वेदिक चिकित्सा का आचार्य माना जाता है। यह चरक कनिष्क का राजवैद्य था।

बौद्धों के कारण शिल्पकला ने भी बहुत उन्नति की, क्योंकि बौद्ध धर्म मानने वाले बुद्ध और उनके अवतारों की मूर्तियाँ बना कर पूजते थे। कनिष्क के राज्य में बहुत से यूनानी बसे थे। इन्होंने यूनानी ढंग पर बुद्ध की बहुत सी मूर्तियाँ बनाईं जो भारत में प्रतिष्ठित हुईं। यों भारतीय शिल्पकला यूनानी कला से प्रभावित हुई।

उन दिनों मथुरा में बहुत से बौद्ध मंदिर थे जिनकी मूर्तियां मथुरा के संग्रहालय में सुरक्षित हैं। इनमें एक मूर्ति कनिष्क की है। सिर का पता नहीं है, परन्तु धड़ सुरक्षित है और दर्शनीय है।

९

विक्रमादित्य और कालिदास

मौर्य साम्राज्य के छिन्न-भिन्न होने के पाँच सौ वर्ष बाद गुप्त वंश ने दूसरा एक-छत्र राज्य बनाया।

इस वंश का सबसे प्रतापी राजा चंद्रगुप्त विक्रमादित्य था। इसकी राजधानी पटना और अयोध्या में थी। उस समय मालवा और गुजरात में शक वंश के राजा राज्य करते थे। ये राजा क्षत्रप कहलाते थे। इनके राज्य में बहुत-से ज्योतिषी थे और क्षत्रप इनका आदर भी करते थे। परन्तु ये क्षत्रप विदेशी थे और चंद्रगुप्त स्वदेशी वैष्णव था। वह शक राज्यों को नष्ट करना चाहता था।

पर शक राज्य शक्तिशाली थे। उन्हें जीतना कठिन था। गुप्त और शक राज्यों के बीच वाकटक राज्य था। उसके राजा को चंद्रगुप्त ने अपनी लड़की ब्याह दी। यों उसके राजा को अपनी ओर किया। फिर दोनों ने मिलकर शक राज्यों पर आक्रमण किया और उन्हें जीत लिया।

उज्जयिनी (आजकल उज्जैन) शकों की राजधानी थी। वहाँ बहुत से ज्योतिषी और पंडित रहते थे। चंद्रगुप्त विद्या-प्रेमी था, अतएव वह उज्जैन में रहने लगा। वह शकारि विक्रमादित्य की उपाधि से प्रसिद्ध हुआ। उसने ज्योतिषियों और पंडितों का आदर किया। कहा जाता है कि उसके दरबार में नौ बड़े-बड़े विद्वानों की मंडली थी जो नवरत्न के नाम से प्रसिद्ध थी। इस नवरत्न मंडली में

कवि कालिदास और ज्योतिषी आर्य भट्ट तथा वाराह मिहिर के नाम विशेष प्रसिद्ध थे।

इन ज्योतिषियों ने 'मालव' नाम से एक संवत् प्रचलित किया था। विक्रमादित्य के भक्त होकर उसका नाम उन्होंने विक्रम संवत् रख दिया। यह विक्रम संवत् 'मालव' नाम से सन् ईसवी से ५७ वर्ष पहले प्रारम्भ हुआ। विक्रमादित्य इस संवत् के प्रारम्भ होने के साढ़े चार सौ वर्ष बाद मालवा के सम्राट हुए। तब इस संवत् का नाम विक्रम हो गया। तब से भारत में इसी संवत् का सबसे अधिक चलन है।

विक्रमादित्य के समय तक भारत का चीन से संपर्क होगया था। उसके शासन काल में बौद्ध ग्रन्थों की खोज में फाह्यान नामक चीनी ने भारत की यात्रा की। यहाँ वह १४ वर्ष तक रहा। उसने अपनी भारत यात्रा का जो वर्णन लिखा है उससे मालूम होता है कि भारत-में उस समय लोग बहुत सच्चे, सुखी और उदार थे। उनमें धार्मिक विद्वेष नहीं था। देश धन-धान्य पूर्ण था और राजा वैष्णव होकर भी बौद्ध धर्म का आदर करता था।

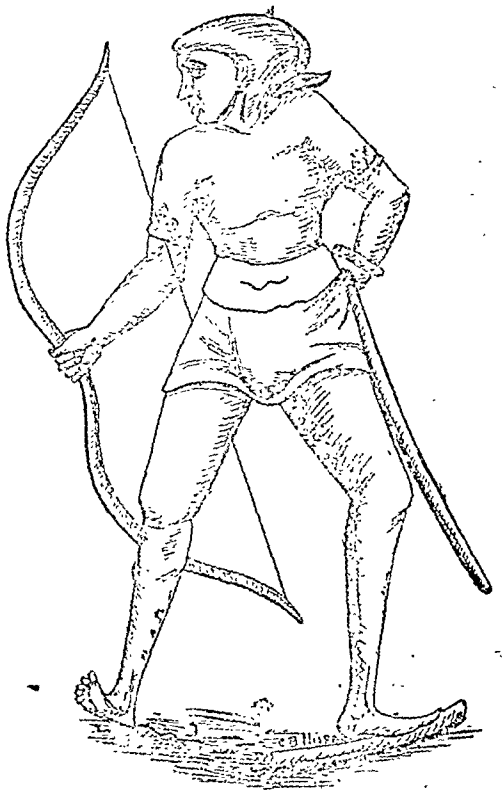

चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य (सिक्के में अंकित चित्र)

विक्रमादित्य के साथ कालिदास का नाम लिया जाता है। परन्तु विद्वानों का विचार है कि कालिदास का अधिकांश जीवन विक्रमादित्य के उत्तराधिकारी कुमारगुप्त के संरक्षण में बीता।

कालिदास संस्कृत का सर्वोच्च कवि माना जाता है। इस कवि के विषय में प्रसिद्ध है कि लड़कपन में वह बिलकुल मूर्ख था। विद्योत्तमा नामक एक विदुषी राजकुमारी ने यह घोषणा की कि जो मुझे शास्त्रार्थ में हरा देगा उसके साथ मैं विवाह करूँगी। बड़े-बड़े पंडित उससे शास्त्रार्थ करने पहुँचे और सब उससे हार गये। खीझकर उन्होंने सोचा, इस लड़की का विवाह किसी मूर्ख से ही होना चाहिए। ढूँढ़ने निकले तो देखा एक नवयुवक को जो जिस डाल पर बैठा था उसी पर कुल्हाड़ी चला रहा था। पंडितों को आदर्श मूर्ख मिल गया। उन्होंने उसे नीचे बुलाकर कहा कि चलो, हम तुम्हारा ब्याह करा दें; शर्त यह है कि बोलना नहीं, इशारे से ही बात करना।

पंडित इस नवयुवक को विद्योत्तमा के सामने ले गये। कहा, यह महान पंडित हैं, परन्तु आज कल मौन रहते हैं। संकेत से शास्त्रार्थ कीजिए।

शास्त्रार्थ प्रारंभ हुआ। विद्योत्तमा ने एक अंगुली दिखाई। मतलब यह था कि ब्रह्म एक है। कालिदास समझा कि विद्योत्तमा मेरी आँख फोड़ने को कहती है। उसने बदले में दो अंगुलियाँ दिखाईं यह संकेत करने के लिए कि तुम्हारी मैं दोनों आँखें फोड़ दूंगा। पंडितों ने समझाया—आप कहती हैं कि परमात्मा ही सब कुछ है। यह पंडित कहते हैं परमात्मा के साथ और उससे अलग आत्मा भी है। इसी प्रकार दो-चार और संकेत हुए। सबको कालिदास कुछ समझा और पंडित ने विद्योत्तमा को कुछ और समझाया। यों वह समझी कि मैं हार गई और उसने कालिदास से विवाह कर लिया।

कवि कालिदास और ज्योतिषी आर्य भट्ट तथा वाराह मिहिर के नाम विशेष प्रसिद्ध थे।

इन ज्योतिषियों ने 'मालव' नाम से एक संवत् प्रचलित किया था। विक्रमादित्य के भक्त होकर उसका नाम उन्होंने विक्रम संवत् रख दिया। यह विक्रम संवत् 'मालव' नाम से सन् ईसवी से ५७ वर्ष पहले प्रारम्भ हुआ। विक्रमादित्य इस संवत् के प्रारम्भ होने के साढ़े चार सौ वर्ष बाद मालवा के सम्राट हुए। तब इस संवत् का नाम विक्रम हो गया। तब से भारत में इसी संवत् का सबसे अधिक चलन है।

विक्रमादित्य के समय तक भारत का चीन से संपर्क होगया था। उसके शासन काल में बौद्ध ग्रन्थों की खोज में फाह्यान नामक चीनी ने भारत की यात्रा की। यहाँ वह १४ वर्ष तक रहा। उसने अपनी भारत यात्रा का जो वर्णन लिखा है उससे मालूम होता है कि भारत-में उस समय लोग बहुत सच्चे, सुखी और उदार थे। उनमें धार्मिक विद्वेष नहीं था। देश धन-धान्य पूर्ण था और राजा वैष्णव होकर भी बौद्ध धर्म का आदर करता था।

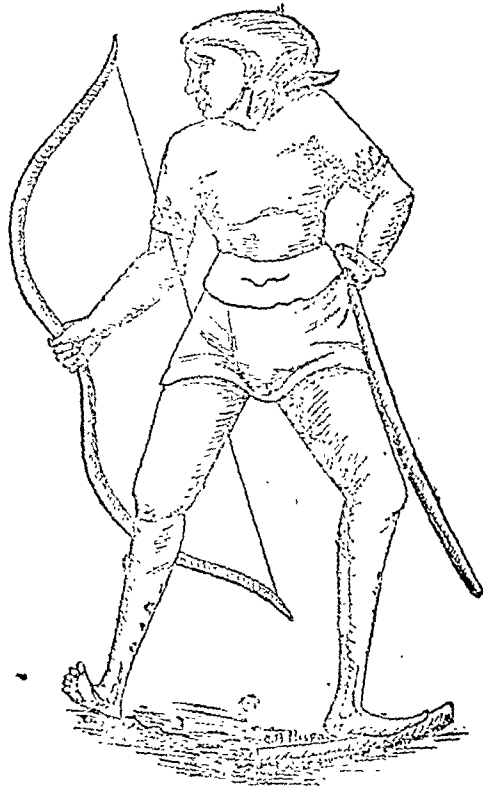

चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य (सिक्के में अंकित चित्र)

विक्रमादित्य के साथ कालिदास का नाम लिया जाता है। परन्तु विद्वानों का विचार है कि कालिदास का अधिकांश जीवन विक्रमादित्य के उत्तराधिकारी कुमारगुप्त के संरक्षण में बीता।

कालिदास संस्कृत का सर्वोच्च कवि माना जाता है। इस कवि के विषय में प्रसिद्ध है कि लड़कपन में वह बिलकुल मूर्ख था। विद्योत्तमा नामक एक विदुषी राजकुमारी ने यह घोषणा की कि जो मुझे शास्त्रार्थ में हरा देगा उसके साथ मैं विवाह करूँगी। बड़े-बड़े पंडित उससे शास्त्रार्थ करने पहुँचे और सब उससे हार गये। खीझकर उन्होंने सोचा, इस लड़की का विवाह किसी मूर्ख से ही होना चाहिए। ढूँढ़ने निकले तो देखा एक नवयुवक को जो जिस डाल पर बैठा था उसी पर कुल्हाड़ी चला रहा था। पंडितों को आदर्श मूर्ख मिल गया। उन्होंने उसे नीचे बुलाकर कहा कि चलो, हम तुम्हारा ब्याह करा दें; शर्त यह है कि बोलना नहीं, इशारे से ही बात करना।

पंडित इस नवयुवक को विद्योत्तमा के सामने ले गये। कहा, यह महान पंडित हैं, परन्तु आज कल मौन रहते हैं। संकेत से शास्त्रार्थ कीजिए।

शास्त्रार्थ प्रारंभ हुआ। विद्योत्तमा ने एक अंगुली दिखाई। मतलब यह था कि ब्रह्म एक है। कालिदास समझा कि विद्योत्तमा मेरी आँख फोड़ने को कहती है। उसने बदले में दो अंगुलियाँ दिखाईं यह संकेत करने के लिए कि तुम्हारी मैं दोनों आँखें फोड़ दूँगा। पंडितों ने समझाया—आप कहती हैं कि परमात्मा ही सब कुछ है। यह पंडित कहते हैं परमात्मा के साथ और उससे अलग आत्मा भी है। इसी प्रकार दो-चार और संकेत हुए। सबको कालिदास कुछ समझा और पंडित ने विद्योत्तमा को कुछ और समझाया। यों वह समझी कि मैं हार गई और उसने कालिदास से विवाह कर लिया।

विवाह के पश्चात् रात को जब दोनों सो रहे थे तो ऊँट की बोली सुनाई दी। कालिदास मौन रहना भूल गया। उसके मुँह से 'उष्ट्र' शब्द निकल गया जिससे विद्योत्तमा की समझ में आया कि यह वज्र देहाती है। उसने क्रोध में आकर उसे महल के नीचे गिरा दिया। वहाँ वह एक देवी के ऊपर जा गिरा। देवी जी समझीं कि इसने अपने को मुझ पर बलिदान दे दिया। उन्होंने उससे कहा-वर माँग। वह समझा, पूछ रही है कि किसने तुम्हें गिराया। तो उसने उत्तर दिया, 'विद्या विद्या'। देवी जी ने वर दिया, 'तथास्तु'।

उस समय से कालिदास स्वाध्याय करने लगे। फिर जब प्रकांड पंडित हो गये तो विद्योत्तमा के घर पहुँचे और उसे पुकारा—अनावृत कपाटं द्वारं देहि; अर्थात् द्वार खोलो। विद्योत्तमा ने अपने पति के मुख से शुद्ध संस्कृत काव्यमय वाक्य सुनकर कहा—अस्ति कश्चिद् वाग्विशेषः; अर्थात् वाणी में कोई विशेषता है। अपनी विदुषी के इस वाक्य के एक-एक शब्द से कवि कालिदास ने जो उत्तर दिया उससे आगे चलकर तीन ग्रन्थ प्रारम्भ किये—'अस्ति' से 'कुमार संभव', 'कश्चिद्' से 'मेघदूत' और 'वाग' से रघुवंश।

कालिदास संस्कृत के सबसे बड़े कवि माने जाते हैं और संसार के बड़े कवियों में उनकी गिनती है। उनका 'शकुंतला' नाटक संस्कृत में सबसे उत्तम माना जाता है, उनका 'मेघदूत' संस्कृत का सर्वोत्कृष्ट गीत काव्य है और उनके 'रघुवंश' की संस्कृत के अच्छे महाकाव्यों में गणना है।

इतने बड़े कवि ने, जिनका यश अमर है अपनी कोई जीवनी नहीं लिखी। ऊपर कही कहानी दंतकथा ही है।

अपने जीवन काल के विषय में उन्होंने कुछ नहीं लिखा। केवल अनुमान ही है कि चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य तथा उनके पुत्र कुमारगुप्त के वह राज-कवि थे।

१०

विशाल भारत

हमारे आर्य पूर्वज पंजाब से पूरे उत्तरी भारत में फैले ; फिर उनके साहित्य, उनके आचार-विचार और रहन-सहन से दक्षिणी भारत के निवासी प्रभावित हुए, इस प्रकार पूरे भारत पर आर्य सभ्यता छा गई। राम के समय से बुद्ध के समय तक सभ्यता की दृष्टि से भारत एक देश हो गया।

अब बुद्ध का संदेश लेकर भारतीय सभ्यता पड़ोसी देशों को प्रभावित करने लगी। पश्चिम की ओर भारतीय सभ्यता यूनान और मिस्र तक पहुँची। यूनानी हमारे दर्शनशास्त्रों से प्रभावित हुए और मिस्र तक हमारे देश के व्यापारी पहुँचे। अफगानिस्तान और ईरान में बौद्धों ने बड़े-बड़े विहार बनवाये जहाँ से भारतीय सभ्यता का प्रचार होता रहा। इन विहारों में ईरान के उत्तर खुरासान में नव विहार की बहुत महिमा थी। इस विहार के भिक्षुओं का ईरान दरबार में बहुत आदर था। ईरान पर अरब राज्य हो गया और ईरानी मुसलमान हो गये, तब यह केन्द्र नौबहार के नाम से प्रसिद्ध हुआ और इसके भिक्षु मुसलमान होकर भी संस्कृत में भारतीय साहित्य का अध्ययन करते रहे। खलीफा मामू रशीद के शासन में तो संस्कृत के बड़े-बड़े ग्रन्थों का अरबी में अनुवाद हुआ और तुर्किस्तान से स्वेज तक पूरा अरब संसार भारतीय संस्कृति से प्रभावित हुआ। हमारे पुरखों ने १ से १० तक अंक निकाल कर दशमलव चिन्ह की सहायता से १ के

ऊपर करोड़ों तक और १ से नीचे करोड़वें भाग तक गिनती लिखने का आविष्कार किया था। यह आविष्कार अरब भारत से ले गये। इस कारण ० और १ से ९ तक अंकों को अरब हिंदुसे कहते हैं और अरबों से ये अंक योरप के लोगों ने पाये। इसलिए ये अंक उनकी भाषा में अरेबिक न्यूमरल्स कहे जाते हैं।

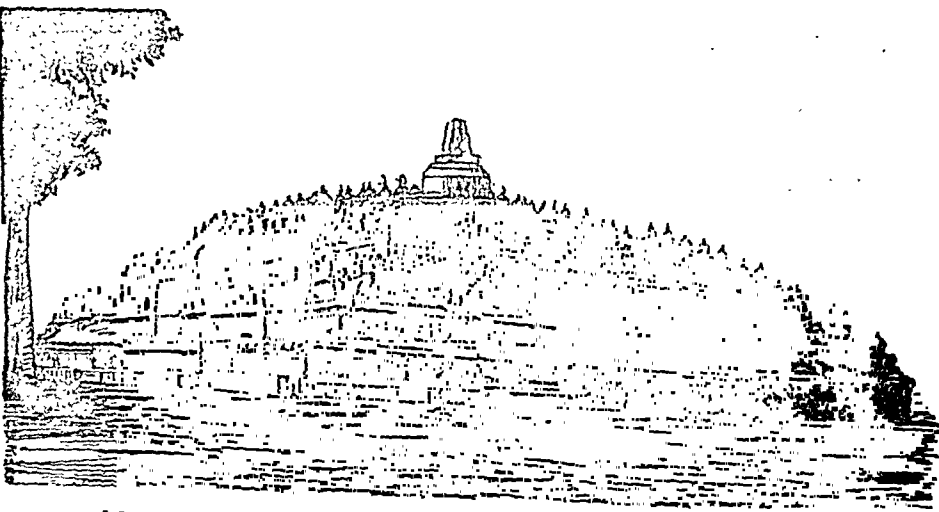

जावा का बरबुडूर मंदिर

यहाँ तक पश्चिमवर्त्ती देशों की बात हुई। हमारी सभ्यता दक्षिण और पूर्व की ओर भी बढ़ी। सिंहल तक बौद्ध धर्म को अशोक ने पहुँचाया। फिर बौद्ध धर्म बर्मा तक पहुँचा। इसके पश्चात् स्याम मलाया हिंदचीन और हिंदेशिया के लोग भारतीय सभ्यता से ऐसे ही प्रभावित हुए जैसे आगे चलकर अमरीका अंग्रेजी सभ्यता से प्रभावित हुआ। अमरीका में अंग्रेजों के यार्क के नाम पर न्यूयार्क बसाया। हजार वर्ष पहले भारतीयों ने स्याम में अपने भारत की अयोध्या बसाई। इसी प्रकार इन देशों में हमारे साहित्य का प्रचार हुआ। जिस देश के मंदिर और महल यहाँ बनते थे उनसे मिलते-जुलते मंदिर और महल

वहाँ भी बने। हिंदचीन में अंगकोर और जावा में बरबुदूर के मंदिर हमारी सभ्यता के वहाँ पहुँचने के साक्षी हैं। जावा के निवासी अब मुसलमान हो गये हैं, परन्तु जैसे हमारे देश में दशहरे पर राम-लीला होती है वैसे ही जावा में भी होती है।

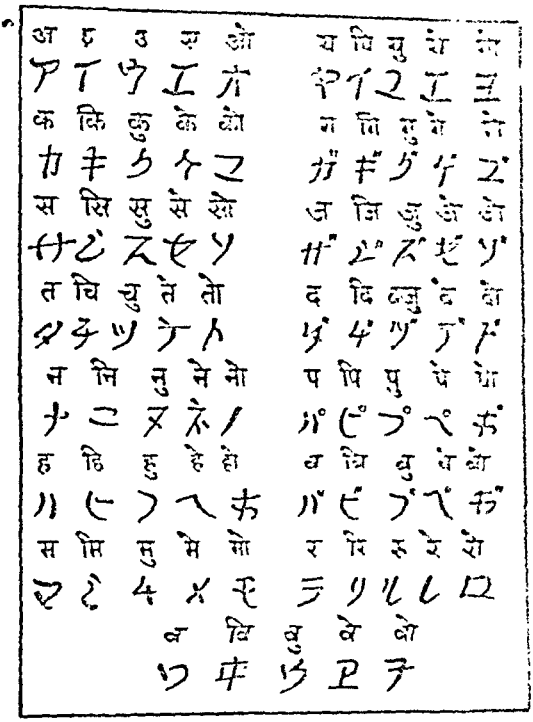

जापानी कण लिपि

चीन और जापान तक हमारा साहित्य तो कम पहुँचा। परन्तु इन देशों की जनता बुद्ध के संदेश से बहुत प्रभावित हुई। चीन और जापान की भाषाएँ हमारी भाषाओं से भिन्न हैं, तो भी चीन या जापान पहुँचने पर हमें ये देश अनजाने नहीं लगते। यहाँ भी लोग मंदिरों में जूते खोलकर जाते हैं, हाथ जोड़ते हैं, गाँव-गाँव, नगर-नगर, बुद्ध मंदिर हैं जहाँ घंटे घड़ियाल उसी कदर बजते हैं, जैसे भारतीय मंदिरों में। जापान तक अपने रूप में हमारी वर्णमाला पहुँची ही है।

उस समय तक भारत के भिक्षुओं को जितने भी देशों का पता था, उन सब तक वे पहुँचे और उनके उद्योग से वहाँ की जनता हमारी सभ्यता से परिचित और प्रभावित हुई।

हमारे पुरखों ने यह सब प्रचार किया दौलत कमाने के लिए नहीं, देशों को गुलाम बनाने के लिए नहीं, उन्हें मानवता

का पाठ पढ़ाने के लिए ही। इन देशों के निवासी उजड्ड लड़ाके थे। हमारे पुरखों के प्रचार से इन देशों के इंसानों ने इंसानियत

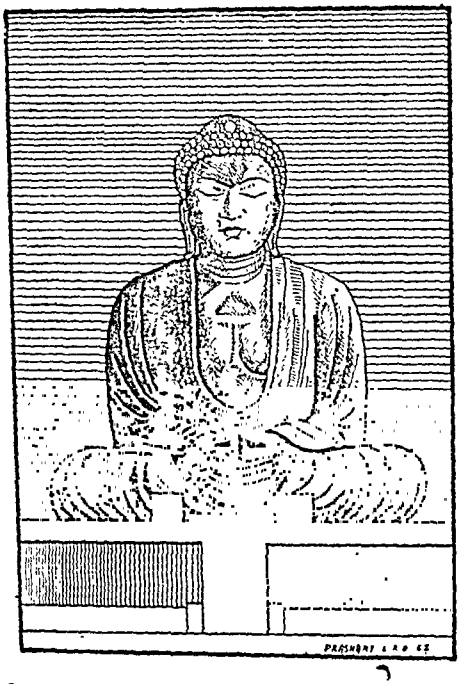

जापान की राजधानी टोकियो के निकट कामाकुरा में भारतीय सभ्यता के प्रसार की पूर्वतम सीमा पर महात्मा बुद्ध की ८०० वर्ष प्राचीन विशाल मूर्ति

सीखी। मानवता, सेवा, सत्य और अहिंसा के पहले संदेश हमारे पुरखों ने ही तत्कालीन संसार को दिये।

राजपूतों की देन

आज से लगभग डेढ़ हजार वर्ष पहले की बात है। मध्य एशिया से हूण नामक एक बर्बर जाति की बाढ़ योरप और भारत की ओर चली। उसकी बाढ़ से योरप में रोमन साम्राज्य नष्ट हुआ और भारत में गुप्त साम्राज्य।

इस एक छत्र राज्य के नष्ट होने पर देश अनेक छोटे-छोटे राज्यों में बंट गया। हर्षवर्धन नामक सम्राट ने अपने पुरुषार्थ से उत्तरी भारत को अपने छत्र के नीचे किया परन्तु उसके मरते ही देश फिर छोटे-छोटे राज्यों में बंट गया। देश की यह दशा लगभग एक हजार वर्ष तक रही। पहले देश पर राजपूतों के राज्य रहे फिर सुल्तानों के शासन हुए। देश को एक करने में दोनों असफल रहे।

देश के छोटे-छोटे राज्यों में बँट जाने पर एक राजा की दूसरे राजा से लड़ाई रहा करती थी, जिस कारण देश विशेष उन्नति नहीं कर सका। परन्तु इन लड़ाइयों में गनीमत यह थी कि दोनों ओर से वेतन पाने वाले सैनिक ही लड़ते थे और वे खेती, व्यवसाय तथा व्यापार में विघ्न नहीं डालते थे, देवस्थानों की भी वे रक्षा करते थे।

देश में साहित्य का निर्माण और प्रचार होता रहा। मंदिर, कोट और महल बनते रहे। यद्यपि कुछ ऐसे शासक भी रहे जिन्हें स्मारकों को तोड़ने में ही मजा आता रहा।

हूणों के हमलों से गुप्त साम्राज्य नष्ट हुआ परन्तु हूणों का कोई राज्य नहीं बना। वे जनता में मिल गये। कहा जाता है कि कई राजपूत घराने हूणों के वंशज हैं।

हूण वीर लड़ाके थे और एक स्थान से दूसरे स्थान में घूमा करते थे। लड़ाई में इनके मारे जाने पर इनकी विधवाओं की रक्षा कठिन हो जाती थी क्योंकि इनका कोई घर-बार नहीं था। अतएव इनके मारे जाने पर उनकी विधवायें चिता पर जलकर सती हो जाती थीं। भारत में बसने परये ही हूण राजपूत राजा हुए। ये एक स्थान पर रहने लगे थे। परंतु इनकी सती प्रथा बनी रही। अब इनकी देखा-देखी भारत की अन्य जातियों में भी सती प्रथा चालू हुई।

हूण वीर लड़के थे। राजपूत होकर भी उनकी वीरता और लड़ने की प्रवृत्ति बनी रही जिस कारण वे बौद्ध मत की ओर नहीं झुके। अतः राजपूती शासन में बौद्ध धर्म के मानने वालों की संख्या कम हो गई।

बौद्धों की संख्या घटी तो ब्राह्मणों की प्रतिष्ठा करने वाले हिंदुओं की संख्या बढ़ी। संस्कृत साहित्य में १८ पुराण हैं। इन पुराणों में कथाएं हैं। ये कथाएँ इस प्रकार लिखी गई हैं जैसे कोई बीती बात नहीं, भावी बात कह रहा हो। हिंदुओं के धार्मिक विश्वासों का जो रूप अब हुआ, यह पुराणों में लिखा है। अधिकांश पुराण राजपूतों के शासन काल ही में बने।

हूण कभी एक जगह स्थिर होकर बैठने के आदी न थे। अतएव जब ये राजपूत हो गए तो उन्हें जमीन से बांध कर एक जगह बने रहने का एक ढंग सोचा गया। यह ढंग जो योरप में था वही भारत में था।

जो ढंग प्रचलित किया गया उसे सामंत प्रथा कहते हैं। यह प्रथा इस प्रकार थी। सम्राट सबसे ऊँचा था। उसके नीचे राजा थे

जो अपनी भूमि के शासन में स्वतंत्र थे। उन्हें महसूल देने के बदले सम्राट को सैनिक सहायता देनी होती थी। इन राजाओं के नीचे सामंत थे जो जमीनें किसानों को दिये हुये थे। किसान लगान न देकर सामंत की सेवा कर दिया करते थे।

इस प्रथा के कारण राजा और प्रजा भूमि से बँध गये। वे अब भूमि छोड़कर कहीं जा न सकते थे। परन्तु ऊँच-नीच का भेद बढ़ गया। आपस की लड़ाइयाँ बढ़ गईं। भारत में यह युग कलह का था।

परन्तु राज छोटे हो गये तो उनकी छोटी-छोटी राजधानियाँ हुईं, छोटे-छोटे दरबार हो गये। सभी राजाओं ने महल बनवाये, मंदिर

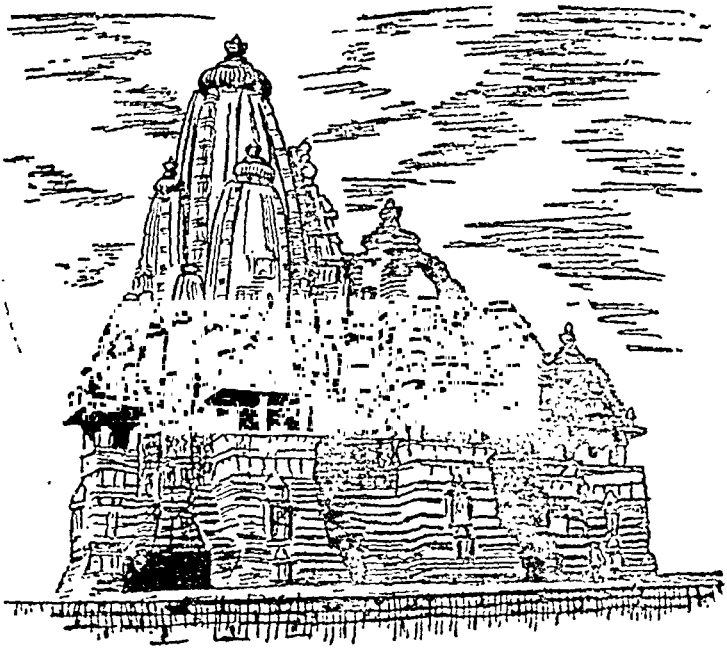

खजुराहो के मन्दिर

बनवाये, किले बनवाये। सभी के दरबार में कवि रहते थे जो उनकी तारीफ किया करते थे। राजपूत सामंतों के शासन में भी साहित्य और कला की उन्नति होती रही, नगरों की संख्या बढ़ती रही।

विद्यालय उस समय बौद्ध संसार का प्रधान केन्द्र माना जाने लगा। हर्ष के समय चीनी यात्री युआन च्वांग ने बौद्ध ग्रन्थों का अध्ययन यहीं किया। फिर बिहार के पाल राजाओं के शासन में नालंदा बौद्ध साहित्य के अतिरिक्त अन्य विषयों की पढ़ाई का केन्द्र हो गया।

नर्मदा नदी के दक्षिण राष्ट्रकूट, पल्लव और चोल राजाओं के राज रहे। सभी राजाओं ने संस्कृत के विद्वानों का आदर किया। पल्लव राजाओं ने मद्रास के निकट कांची को संस्कृत शिक्षा का प्रधान केन्द्र बनाया। महाकवि भारवि और भाष्यकार दंडी कांची के ही थे। चोल राजाओं ने अपनी नाविक शक्ति बढ़ाकर कुछ समय तक जावा द्वीप पर भी अधिकार रखा।

पृथ्वीराज चौहान

आज से तेरह सौ वर्ष पहले की बात है, मोहम्मद पैगम्बर ने अरब जनता के सामने यह संदेश रखा कि ईश्वर एक है, मोहम्मद उसका रसूल है और उसके सब मानने वाले एक-दूसरे के बराबर हैं।

अरब उनका यह सन्देश लेकर संगठित हुए और उन्होंने पैगम्बर के सन्देश का प्रचार प्रारभ किया। सौ वर्ष के भीतर संगठित मुस्लिम अरबों की शक्ति स्पेन से तुर्किस्तान तक पहुँच गई। अरबों ने सिंध पर भी अधिकार किया।

धीरे-धीरे अरब शक्ति कम हुई और तुर्कों ने अफगानिस्तान पर अधिकार किया। फिर उसके उत्तराधिकारी महमूद ने भारत पर आक्रमण किये और गुजरात का सोमनाथ मन्दिर तक उसने लूटा। यह बात अबसे लगभग साढ़े नौ सौ वर्ष पहले की है। इसके बाद डेढ़ सौ वर्ष तक राजपूत राज्यों को आपस में संगठित होने का मौका मिला। परंतु वे संगठित न हो पाये। दिल्ली के राजा पृथ्वीराज और कन्नौज के जयचंद आपस में लड़ते रहे और महोबे के आल्हा-ऊदल जयचन्द का साथ देते रहे। परन्तु भारतीय स्वतंत्रता के नाश करने की जो तैयारी अफगानिस्तान में हो रही थी, उसकी ओर से सब निश्चित रहे। आपस की फूट के परिणाम-स्वरूप सब राजपूत राजाओं की एक-एक करके स्वतंत्रता समाप्त हुई। सात सौ वर्ष पहले की बात है। उत्तरी भारत पर मुस्लिम शासन हो गया। पचास वर्ष बाद दक्षिण पर भी मुस्लिम अधिकार हो गया।

१९

इस्लाम की देन

राजपूतों की जगह मुस्लिम सुल्तानों ने ली। परंतु आपस की लड़ाइयाँ उसी प्रकार रहीं। उसी प्रकार जनता इन लड़ाइयों से अलग रही। भेद इतना रहा कि पहले मंदिर बनते थे, अब मस्जिदें और मकबरे बनने लगे। पहले राज-दरबारों में संस्कृत के कवियों का आदर होता था। अब उनकी जगह अरबी-फारसी के विद्वानों ने ली। इमारतों के ढंग भी बदले। राजपूत मंदिरों और भवनों में मेहराबें और गुंबद न होते थे। मुसलमान अरब से यह कारीगरी लाये। इसी-लिए यहाँ की इमारतों में भी मेहराबें निकाली जाने लगीं और उनके ऊपर गुंबद बनने लगे।

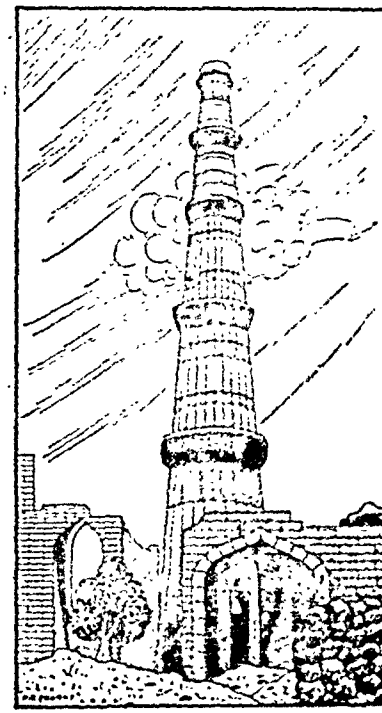

कुतुब मीनार और मस्जिद

हिन्दुओं के मुसलमानों से संपर्क में आने पर एक बात बहुत अच्छी हुई। मुसलमान एक ईश्वर में विश्वास करते थे। मोहम्मद को उसका रसूल मानते थे और उनके बीच ऊँच-नीच का भेद न था।

अरब उनका यह सन्देश लेकर संगठित हुए और उन्होंने पैगम्बर के सन्देश का प्रचार प्रारभ किया। सौ वर्ष के भीतर संगठित मुस्लिम अरबों की शक्ति स्पेन से तुर्किस्तान तक पहुँच गई। अरबों ने सिंध पर भी अधिकार किया।

धीरे-धीरे अरब शक्ति कम हुई और तुर्कों ने अफगानिस्तान पर अधिकार किया। फिर उसके उत्तराधिकारी महमूद ने भारत पर आक्रमण किये और गुजरात का सोमनाथ मन्दिर तक उसने लूटा। यह बात अबसे लगभग साढ़े नौ सौ वर्ष पहले की है। इसके बाद डेढ़ सौ वर्ष तक राजपूत राज्यों को आपस में संगठित होने का मौका मिला। परंतु वे संगठित न हो पाये। दिल्ली के राजा पृथ्वीराज और कन्नौज के जयचंद आपस में लड़ते रहे और महोबे के आल्हा-ऊदल जयचन्द का साथ देते रहे। परन्तु भारतीय स्वतंत्रता के नाश करने की जो तैयारी अफगानिस्तान में हो रही थी, उसकी ओर से सब निश्चित रहे। आपस की फूट के परिणाम-स्वरूप सब राजपूत राजाओं की एक-एक करके स्वतंत्रता समाप्त हुई। सात सौ वर्ष पहले की बात है। उत्तरी भारत पर मुस्लिम शासन हो गया। पचास वर्ष बाद दक्षिण पर भी मुस्लिम अधिकार हो गया।

१९

इस्लाम की देन

राजपूतों की जगह मुस्लिम सुल्तानों ने ली। परंतु आपस की लड़ाइयाँ उसी प्रकार रहीं। उसी प्रकार जनता इन लड़ाइयों से अलग रही। भेद इतना रहा कि पहले मंदिर बनते थे, अब मस्जिदें और मकबरे बनने लगे। पहले राज-दरबारों में संस्कृत के कवियों का आदर होता था। अब उनकी जगह अरबी-फारसी के विद्वानों ने ली। इमारतों के ढंग भी बदले। राजपूत मंदिरों और भवनों में मेहराबें और गुंबद न होते थे। मुसलमान अरब से यह कारीगरी लाये। इसी-लिए यहाँ की इमारतों में भी मेहराबें निकाली जाने लगीं और उनके ऊपर गुंबद बनने लगे।

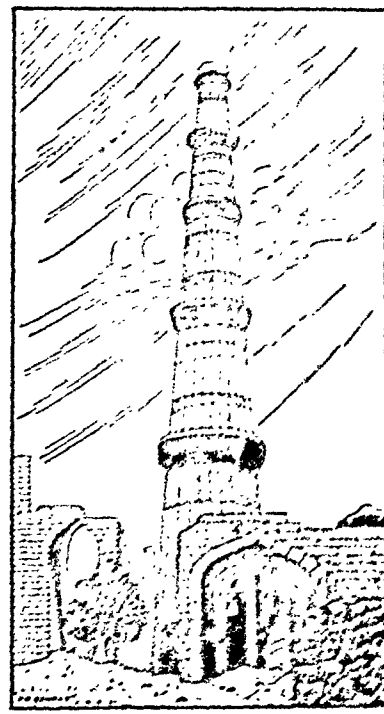

कुतुब मीनार और मस्जिद

हिन्दुओं के मुसलमानों से संपर्क में आने पर एक बात बहुत अच्छी हुई। मुसलमान एक ईश्वर में विश्वास करते थे। मोहम्मद को उसका रसूल मानते थे और उनके बीच ऊँच-नीच का भेद न था।

इस्लाम के संपर्क में आने पर हिंदू जागे। उनके बीच बहुत से उपदेशक हुए, जिन्होंने एक ईश्वर में विश्वास करने का उपदेश दिया। उन्होंने भी यह उपदेश दिया कि गुरू के बिना ईश्वर तक भक्त की पहुँच नहीं, और जो भक्त हैं उनमें ऊँच-नीच का भेद नहीं।

इन उपदेशकों में शंकराचार्य का पहला नंबर है। उन्होंने वैदिक धर्म के पक्ष में और बौद्ध धर्म के विरुद्ध प्रचार किया। फिर जिस प्रकार बौद्धों ने विहार बनाये, उसी प्रकार शंकराचार्य ने भारत के मुख्य केन्द्रों में मठ स्थापित किये। उत्तर प्रदेश में बदरीनाथ का मंदिर शंकराचार्य के स्थापित किये हुए मठों के अधीन है।

शंकराचार्य के बाद माधव, रामानुज और रामानंद ने वैष्णव धर्म का प्रचार किया। इस प्रचार में भी आचार्यों ने ऊँच-नीच के भेद के विरुद्ध उपदेश दिया।

इधर हिन्दू प्रचारक मुस्लिमों की तरह एक ईश्वर और समानता के पक्ष में प्रचार कर रहे थे। उधर फारस के सूफी वेदांत के ईरानी संस्करण का प्रचार कर रहे थे। वे मुस्लिम मुल्लाओं की कट्टरता के विरुद्ध थे। ईरान के सूफी और भारत के संत एक ही बात का प्रचार कर रहे थे और यह थी धार्मिक सहिष्णुता।

आज से सात सौ वर्ष पहले की बात है, मध्य एशिया से मुगल नामकी एक बर्बर जाति ने अफगानिस्तान और फारस के मुस्लिम राज्यों को नष्ट किया और जनता पर बहुत अत्याचार किया। यों ईरान, इराक और अफगानिस्तान से बहुतेरे विद्वान और सूफी भारत भाग आये। विद्वानों की सुल्तानों के दरबारों तक पहुँच हुई और सूफी गाँवों में अपने तकिये बनाकर जनता से घुलमिल गये।

सूफियों ने उदारता का प्रचार किया; तो चैतन्य, कबीर, नानक और तुकाराम जैसे संतों ने हिन्दुओं और मुसलमानों को एक दूसरे से मिलाने का प्रयत्न किया। कबीर के हिन्दू भक्त थे और

मुसलमान भी। इसी प्रकार नानक भी दोनों के मान्य थे। यों सूफी और संत एक दूसरे के गले मिले। मुसलमानों ने हिन्दी अपनाई। अमीर खुसरो और जायसी जैसे कवियों ने हिंदी में कविता की। हिंदुओं में मूर्ति पूजा के विरुद्ध और समानता के पक्ष में प्रचार हुआ। मंदिरों में मेहराब और गुंबद अपनाये गये तो मस्जिदों पर शिखर चढ़े और खंभों पर हिन्दू कला की नकल की गई।

तीन सौ वर्ष तक हिंदू और मुस्लिम भारत में एक साथ रह कर इस प्रकार एक दूसरे से मिलते रहे। मुसलमानों ने हमारी भाषा अपनाई तो हिंदुओं में परदे का चलन पनपा और छूत-छात कम हुई।

देश के अधिकांश भाग पर मुसलमानों का शासन रहा। परन्तु उनके मुकाबले स्वतंत्र हिंदू राज्य भी बने रहे। राजस्थान, मध्यप्रदेश और मद्रास के अन्तर्गत दक्षिणी भारत प्रायः स्वतंत्र ही रहा। जहां मुस्लिम शासन रहा, वहां भी उनका प्रभाव नगरों तक रहा। गाँव और उनकी पंचायतें प्रायः स्वतंत्र ही रहीं। यों अधिकांश भारत पर मुस्लिम राज होते हुए भी देश के अधिकांश निवासी अपने नित्य के जीवन में स्वतंत्र ही रहे। मुस्लिम शासन ऊपर ही ऊपर रहा। मुस्लिमों ने देश की खेती और व्यवसाय में कोई हस्तक्षेप नहीं किया। अधिकांश जनता विदेशी शासन के कष्टों से बची रही।

मुस्लिम शासन के पहले तीन सौ वर्षों में कुछ पुराने नगर नष्ट हुए और नये नगर बने। पुराने नगरों में कन्नौज नष्ट हुआ, आगरा बना। राजपूताने की जितनी राजधानियां हैं वे सब इसी काल की हैं क्योंकि पंजाब और उत्तर प्रदेश पर मुस्लिम अधिकार होने पर वहाँ के राजपूतों ने राजस्थान की मरुभूमि ही बसाई।

१३

संत और कवि

यह जमाना सन्तों, सूफियों और कवियों का था। सन्त और सूफी भी कविता करते थे। भेद यही था कि ये संत और सूफी कोरे कवि नहीं थे, गुरु भी थे, सभी की अपनी-अपनी शिष्य मंडली थी। जो कवि थे वे या तो किसी संत के शिष्य थे और काव्य द्वारा भक्ति या ज्ञान का प्रचार करते थे या किसी राजा अथवा नवाब के आश्रित थे और उसकी तारीफ करते थे। यहाँ जनता के संतों, सूफियों और कवियों की ही बात करनी है।

सूफियों में चिश्तिया संघ के निजामुद्दीन औलिया और शेख सलीम चिश्ति की बात करनी है। निजामुद्दीन का मकबरा दिल्ली के पास हुमायूँ के मकबरे के निकट है। जहाँ उनका मकबरा है वहीं उनका तकिया था। उस जमाने में मोहम्मद तुगलक दिल्ली का सुल्तान था। कहा जाता है कि औलिया साहब को अपने तकिये के निकट तालाब बनवाना था और मोहम्मद तुगलक को महल बनवाना था। सुल्तान ने औलिया साहब के मजदूर अपने काम पर लगा लिये। औलिया साहब को रात के समय मशाल के प्रकाश में मजदूरों से काम लेना पड़ा। इसपर तुगलक ने आज्ञा दी कि औलिया साहब के हाथ कोई तेल न बेंचे। औलिया साहब ने फिर भी अपना काम चालू रखा। इसपर तुगलक ने औलिया साहब से रुष्ट होकर कहा कि जिस तालाब को बनवाने की आपको इतनी जल्दी है उसका पानी खारी हो

जायगा। औलिया साहब ने कहा कि जहाँ आप महल बनवा रहे हैं, वहाँ 'या बसें गूजर या रहे ऊजड़'—दोनों बातें सही हुईं।

निजामुद्दीन औलिया की समाधि दिल्ली के निकट निजामुद्दीन स्टेशन के पास है। अहाते में शाहजहाँ की लड़की जहाँआरा की कब्र है, वह उनकी गद्दी की बहुत भक्त थी।

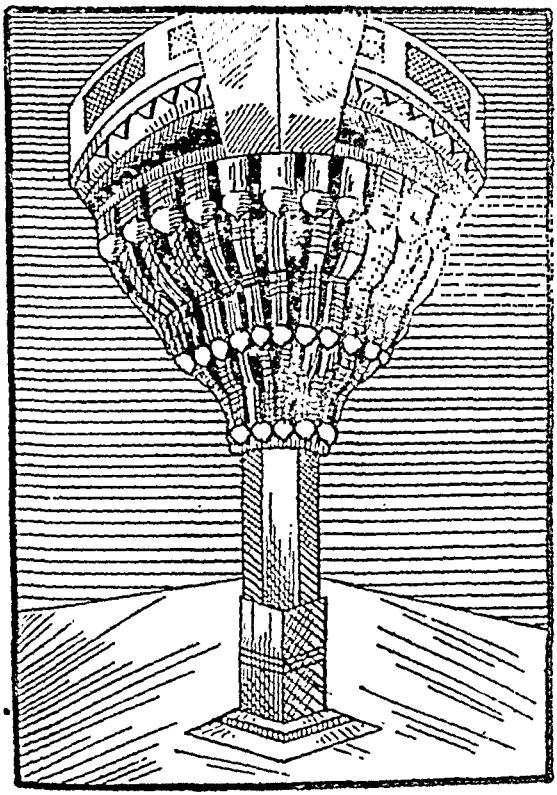

फतेहपुर सीकरी में दीवाने-खास का स्तम्भ

शेख सलीम चिश्ति के अकबर बहुत बड़े भक्त थे, उसके ही आशीर्वाद से अकबर की जोधाबाई से पुत्र जन्मा और अकबर ने उसे शेख साहब का प्रसाद मान कर उसका नाम सलीम रखा। इन शेख का तकिया आगरा के निकट फतेहपुर सीकरी में था जहाँ उनके मरने पर अकबर ने उनके बहुत सुन्दर मकबरे के साथ अपने महल भी बनवाये। फतेहपुर सीकरी के इन महलों में अब कोई रहता नहीं। परन्तु यह इतने शोभनीय हैं कि दूर-दूर के यात्री इन्हें देखने आते हैं।

कवियों और संतों की सूची बहुत लम्बी है। चंदबरदाई ने पृथ्वीराज रासो लिखा, जगनायक आल्हा खंड के रचयिता माने जाते हैं। शारंगधर ने हम्मीर-रासो लिखा। मीराबाई के भजन कृष्ण की

भक्ति से ओतप्रोत हैं। बिहार में विद्यापति ठाकुर ने मैथिली में कविता की। बंगाल में मलधर वसु और कवींद्र परमेश्वर जैसे कवि हुए। नरसी मेहता ने गुजराती में और नामदेव ने मराठी में कविता की। आम्लसनि विजयनगर के महाराजा कृष्णदेव राय का राजकवि था।

संतों में शंकराचार्य, रामानुज और माधव की बात हो चुकी है। चैतन्य बंगाल में जन्मे। यह राधाकृष्ण के परम भक्त थे। उनके नाम का कीर्तन करते-करते वह अपने को भूल जाते थे। उनका कहना था कि भक्तों में भेद-भाव नहीं होना चाहिए। अपने भक्तों में गौरांग महाप्रभु के नाम से प्रसिद्ध हुए। उनके उपदेश से बगाल में कीर्तन का चलन हुआ जो अब उत्तर प्रदेश तक पहुँचा है। साढ़े पाँच सौ वर्ष हुए कबीर एक जुलाहे के घर जन्मे। रामानंद के शिष्य होकर उन्होंने बहुत सरल ढंग पर जनता की भाषा में भजनों द्वारा हिन्दू-मुस्लिम विद्वेष और जाति-पाँति के विरुद्ध तथा निर्गुण ईश्वर के पक्ष में प्रचार किया। उन्होंने वेदांत देहातियों की झोपड़ियों तक पहुचाया। वह कहते थे कि मनुष्य भक्ति से ज्ञान प्राप्त कर सकता है, परन्तु भक्ति सच्ची होनी चाहिए। ईश्वर सब जगह है, मंदिर में भी और मसजिद में भी। राम कहो चाहे रहीम, परन्तु सच्चे दिल से उसका नाम लो। गरीब और अमीर, ऊँच और नीच सबके लिए एक ही

चैतन्य महा प्रभु

मार्ग है। उनका यह संदेश हमें नीचे लिखे पद में मिलता है।

जो खुदाय मसजीद बसतु है—
और मुलुक केहि केरा।
तीरथ मूरत राम निवासी—
दुइ मां किनहूँ न हेरा॥
पूरब दिसा हरी को बासा—
पच्छिम अलह मुकामा।
दिल मां खोजि दिलहि मां खोजै—
इहै करीमा रामा॥

महात्मा कबीरदास

कबीर के मानने वाले कबीर पंथी कहलाते हैं। काशी में कबीर-चौरा उनका प्रसिद्ध मंदिर है और बस्ती के निकट मगहर में उनकी

समाधि है। कबीर पंथी कबीर के गीत गातें हैं। गीतों की अंतिम पंक्ति में ये शब्द आते हैं—'कहत कबीर सुनौ भाई साधो।'

कबीर के सत्तर वर्ष बाद गुरुनानक ने लाहौर के निकट जन्म लिया। नानक ने भी कबीर की तरह हिन्दुओं और मुसलमानों को प्रेम के धागे से बांधने का प्रयत्न किया। उन्होंने भी प्रचार के लिए हिन्दी के दोहे ही अपनाये। शिष्य के लिए पंजाबी शब्द है

गुरु नानक

'सिख'। अतएव नानक के भक्त सिख कहलाये। गुरु नानक के दोहे जिस ग्रंथ में हमें पढ़ने को मिलते हैं उसे 'ग्रंथ साहब' कहते हैं। जैसे मुसलमान कुरान का आदर करते हैं वैसे ही सिख ग्रंथ साहब का आदर करते हैं। अमृतसर का स्वर्ण मंदिर सिखों का प्रधान मंदिर है। वहाँ जाकर हजारों यात्री ग्रंथ साहब की फूलों से पूजा करते हैं और प्रसाद पाते हैं।

इन संतों के शिष्य हुए और इनके पंथ चले। इनके अतिरिक्त तीन कवियों के नाम लेने हैं जो ज्ञान और भक्ति में इनसे कम नहीं

थे। केवल उन्होंने अपने कोई पंथ नहीं चलाये। मीराबाई राजस्थान की एक राजकुमारी थीं जो व्याही जाकर भी कृष्ण भक्ति में लीन रहीं। उनके पद भजनानंदियों को बहुत प्रिय हैं। उनका वह पद बहुत प्रसिद्ध है जिसकी पहली पंक्ति नीचे लिखी है—

'मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरा न कोई।'

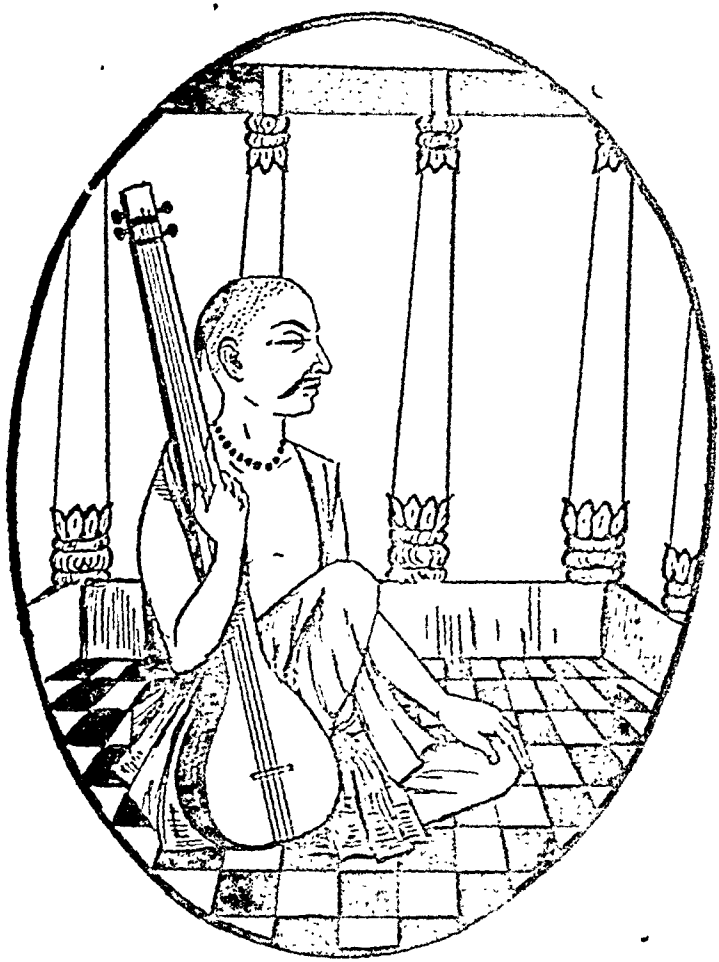

भक्त सूरदास

महात्मा गाँधी को मीरा के पद बहुत प्रिय थे। प्रार्थना के समय मीरा का कोई गीत गाया जाता और वह आँखें बंद करके आनंद में मग्न हो जाते।

मीरा के बाद सूरदास के पद भी भजनानंदियों को बहुत प्रिय हैं। उनके सब पद सूरसागर नामक ग्रंथ में छपे हैं। उनके वे पद बहुत सुन्दर हैं जिनमें कृष्ण की बाल-लीला और उनके मथुरा से विदा होने पर गोपियों की विरह के वर्णन हैं। सौंदर्य में इन पदों की बराबरी करने वाली कविता संसार की किसी भी भाषा में नहीं है। सूरदास अंधे थे। हमारी-तुम्हारी तरह देख नहीं सकते थे। परन्तु उनकी अन्दर की आँखें खुली थीं।

तुलसीदास

जिस प्रकार सूरदास कृष्ण के भक्त रहे, उसी प्रकार तुलसीदास राम के भक्त थे। सूरदास की तरह उन्होंने भी राम की भक्ति में बहुत से पद बनाये। परन्तु उनकी प्रसिद्धि 'राम चरित मानस' के ही कारण है जिसमें उन्होंने वाल्मीकीय रामायण के आधार पर 'स्वांतः

सुखाय' पतित पावन राम का जीवन-चरित्र लिखा है। उनके समय तक रामायण संस्कृत के पंडित ही पढ़ और समझ सकते थे। तुलसीदास ने राम का जीवन चरित्र घर-घर पहुँचा दिया।

तुलसीदास ने भारत के अन्य बड़े-बड़े कवियों की भांति अपनी कोई जीवनी नहीं लिखी। उनकी जन्म-तिथि कोई नहीं बता सकता। परन्तु उनकी मृत्यु-तिथि इस प्रकार प्रसिद्ध है :—

संवत् सोलह सौ असी, असी गंग के तीर,
श्रावण शुक्ला सप्तमी, तुलसी तज्यो शरीर।

इस हिसाब से उन्हें मरे लगभग सवा तीन सौ वर्ष हुए हैं। परन्तु उनकी आत्मा उन सब पाठकों के हृदय में जीवित है जो राम चरितमानस पढ़ते हैं। नहीं पढ़ी है, तो अवश्य पढ़ो।

१४

मुगल बादशाह

गुप्त सम्राट विक्रमादित्य की बात हो चुकी है। गुप्त साम्राज्य टूटने के एक हजार वर्ष बाद तक भारत में कोई एक-छत्र राज्य नहीं बन सका। देश को एक-छत्र के नीचे लाने का पुण्य मुगल बादशाह अकबर ने ही प्राप्त किया।

अकबर के पुरखे तुर्किस्तान के निवासी थे। अकबर भारत में ही पैदा हुआ। उसके पूर्वज तैमूर ने अकबर के पैदा होने के डेढ़ सौ वर्ष पहले भारत पर हमला करके दिल्ली को तहस-नहस किया था। फिर उसके बाबा बाबर ने उत्तरी भारत पर अधिकार किया और उसके पिता हुमायूँ ने दिल्ली की बादशाहत खोई। यों हुमायूँ के मरने पर जब दिल्ली से कुछ दूर गुरदासपुर के निकट अकबर के बादशाह बनाये जाने की रस्म पूरी की गई तो वह १४ वर्ष का बालक था और बिना बादशाहत का बादशाह था।

अकबर तुर्क था। परन्तु दिल्ली सल्तनत स्थापित होने के बाद देश पर मुगलों के धावे हुए। इनके बाद तैमूर और बाबर के धावे हुए तो इन्हें भी भारतीय प्रजा ने मुगल ही माना। यों अकबर मुगल बादशाह माना गया। वास्तव में वह मुगल न था, तुर्क था।

किस प्रकार इस हीन दशा से अकबर ने भारत पर एक-छत्र राज्य स्थापित किया, इसकी कहानी बहुत रोचक है।

अकबर में कई गुण थे। वह पढ़ा-लिखा न था, परन्तु विद्वानों की संगति का शौकीन था। वह सुन्नी मुस्लिम था। परन्तु उसके धार्मिक विचार बहुत उदार थे। शिया, और सूफी, हिन्दू, पारसी, जैन और ईसाई सब का वह आदर करता था। सब की बात वह सुनता था।

सम्राट अकबर (किशोरावस्था)

राजगद्दी पर बैठने के कुछ ही वर्षों के भीतर अकबर ने अपनी बादशाहत की स्थिति समझ ली। उसने समझ लिया कि भारत में हिन्दू बहुत हैं, मुसलमान कम हैं। हिन्दुओं का भला होकर ही कोई मुसलमान भारत पर शासन कर सकता है। दूसरी बात उसकी समझ में यह आई कि भारत में छोटे-छोटे राज्य हैं। उन्हें जीत लेना तो सरल है, परन्तु देश को एक छत्र के नीचे रखना कठिन है। ऐसा करने के लिए शासन का ऐसा ढंग होना चाहिए कि लाठी की आवश्यकता न रहे, नियम बनें और न्याय के सहारे शासन हो। देश में गरीब अधिक हैं और रईस कम हैं। रईस जनता खुश रहे या न रहे, पर गरीब जनता शासन से अवश्य खुश रहे।

ये सब बातें अकबर ने जवान होते-होते समझ लीं। उसने यह समझ लिया कि मुसलमान शासक हिन्दू प्रजा से खेती और व्यवसाय

में होड़ नहीं करते। हिन्दू प्रजा इस बात में स्वतन्त्र है। वह धर्म की स्वतंत्रता और चाहती है।

पहले कुछ मुसलमान सुल्तान हिंदू प्रजा से जजिया नामक कर वसूल करते थे। इस कर से सुल्तानों को आय कम होती थी और हिंदू प्रजा रुष्ट अधिक होती थी। अकबर ने जजिया कर से हिंदू प्रजा को मुक्त कर दिया। हिंदू तीर्थ यात्रा करने जाते थे तो कुछ मुसलमान शासक दर्शन करने वालों से कर वसूल करते थे। इस कर से भी हिंदू प्रजा रुष्ट थी। अतएव अकबर ने यह कर लगाना भी बन्द कर दिया। अब कर के मामले में हिन्दू मुस्लिम भेद नहीं रहा।

अकबर ने समझ लिया कि राजपूत ही हिंदूओं के नेता हैं। मुसलमानों के देश में आने के पहले वही देश के शासक थे। इसलिए राजपूतों से मेल करने के लिये वह एक पग आगे बढ़ा।

अकबर ने राजपूत राजाओं से कहा, "धर्म में हमारा तुम्हारा कोई भेद-भाव रहा नहीं, हमारा तुम्हारा रोटी-बेटी का सम्बन्ध भी होना चाहिए। राजपूत राजा मुगल बादशाह की कन्या ले लेते तो उनके क्षत्रिय वर्ण में फर्क आता। इसलिए वे अपनी बेटी ही देनी को राजी हुए। यों जयपुर के महाराजा की लड़की से अकबर ने विवाह किया जिससे सलीम जन्मा और अकबर के बाद गद्दी पर बैठा।

अकबर ने राजपूतों से इस प्रकार सम्बन्धित होकर उनकी और अन्य हिन्दुओं की सहायता से पूरे उत्तरी भारत पर अधिकार किया। उसने मानसिंह जैसे वीरों की सहायता से छोटे-छोटे राज्यों को जीता। टोडरमल की सहायता से उसने खेती की उन्नति कराई और मालगुजारी वसूल करने की अच्छी व्यवस्था की।

अकबर के सामने बहुत बड़ी कठिनाई यह थी कि जितना ही वह हिंदुओं से मेल करता, उतने ही कट्टर मुसलमान उसके बैरी होते। इसका तोड़ करने के लिए अकबर ने अपने दो सूफी मित्रों से सहायता

ली : अब्बुल फजल और फैजी। इनकी सहायता से मुसलमान मुल्लाओं ने उसे इस्लाम का खलीफा बना दिया। अब मुसलमान उसका विरोध न कर सकते थे।

अकबर में धार्मिक उदारता तो थी ही, उसे इस्लाम धर्म में विश्वास भी कम था। पहले उसने फतेहपुर सिकरी में विभिन्न धर्मों के आचार्यों के शास्त्रार्थ कराये फिर खलीफा होकर उसने दीन इलाही मत का प्रचार किया। उसकी उदारता तो प्रजा को मान्य थी, परन्तु उसका दीन इलाही मत चालू न हो सका।

अकबर ५० वर्ष तक राज्य करके स्वर्गवासी हुआ। इतने समय के भीतर गोदावरी नदी तक पूरा भारत उसके अधिकार में आ गया। अकबर को केवल एक विरोधी मिला जिसे वह अधीन नहीं कर सका और वह था मेवाड़ का राणा प्रतापसिंह। राजपूतों में प्रतापसिंह तो स्वतंत्रता का झंडा ऊँचा रख सका, बाकी सब अकबर के अधीन हो गये।

अकबर के मरने पर उसका बेटा सलीम जहाँगीर की उपाधि से बादशाह हुआ।

जहाँगीर के शासनकाल तक योरपीय जातियों को भारत का जलमार्ग मालूम हो गया था। अब योरपीय यात्री भारत की सैर करने आने लगे थे। भारत और योरप के बीच व्यापार का लेन-देन सैकड़ों वर्षों से चला आ रहा था। परन्तु व्यापार का मार्ग इस प्रकार था कि अरब के व्यापारी भारत का माल खरीद कर मिश्र ले जाते थे। मिश्र में भूमध्यसागर के तट पर सिकंदरिया नामक एक नगर था। योरप में इटली नामक एक देश है। इटली के व्यापारी सिकंदरिया पहुँच कर यह माल अरबों से मोल लेते थे और पूरे योरप में बेचते थे। लाभ होता था अरबों को या इटालियनों को।

योरप में पुर्तगाल नामक एक देश है। पुर्तगाली अरबों से लड़कर हाल ही में स्वतंत्र हुए थे। वे चाहते थे कि अरबों को हानि पहुँचे और भारत का व्यापार उनके हाथ में आ जाय। यह तभी हो सकता था जब पुर्तगाली समुद्र के मार्ग से ही भारत पहुँच सकें। मार्ग बहुत लंबा था। अफ्रीका महाद्वीप का पूरा चक्कर लगाना था। उस समय के जहाज वायु के सहारे चलते थे। उन्हें तूफानों से बचाना कठिन था। परन्तु पुर्तगाली उद्योगी थे। उन्हें चीनियों से कुतुबनुमा का ज्ञान हो गया था। उसके सहारे कई बार असफल होने के बाद वे समुद्र के मार्ग से ही भारत पहुँच गये।

जहांगीर

अब जो दौलत अरबों और इटालियनों को मिलती थी, वह पुर्तगालियों को मिलने लगी।

उन्हीं दिनों ईसाइयों में दो दल हो गये। जिस दल में पुर्तगाली और इटालियन थे, उसके विरुद्ध दल में अंग्रेज और डच थे। अंग्रेज ब्रिटेन नामक एक टापू में रहते हैं जो योरपीय भूमि से २१ मील ही दूर है।

योरप में राइन नदी के मुहाने पर हालैंड नामक एक छोटा सा देश है। इस देश के निवासी डच कहलाते हैं। अब इन योरपीय

जातियों ने पुर्तगालियों से होड़ करनी प्रारम्भ कर दी। पुर्तगाली अकबर के दरबार में पहुँचे तो अंग्रेजों और डचों ने जहाँगीर के दरबार की हाजिरी दी।

पुर्तगालियों ने सबसे बड़ी भूल यह की कि वे यहाँ भी जनता को ईसाई बनाने के फेर में रहे। उन्हें व्यापार की उतनी फिक्र नहीं रही। वे अकबर को ही ईसाई बनाने के चक्कर में रहे और उसकी उदारता को समझे जैसे वह उनके झाँसे में आ ही रहा है।

अंग्रेज और डच अधिक चतुर थे। उन्होंने व्यापार से ही अपना प्रयोजन रखा। यों पुर्तगालियों की शान घटती रही और अंग्रेज तथा डच आगे बढ़ते रहे।

भारत की सैर करने बहुत से योरपीय पहुँचे। उन्होंने अपने देश पहुँच कर इस देश के सम्बन्ध में बहुत सी बातें कहीं। इन बातों का निचोड़ यह था कि भारत में दौलत तो बहुत है, परन्तु देश के शासक शक्तिशाली नहीं हैं। इन्हें जीतना कठिन नहीं है।

कितने खेद की बात है कि हमारी सब बातों का इन लोगों ने पता लगा लिया और हमारे देश से कोई भी योरप न गया जो उनकी बातों का पता लगाता और हमें उनकी ओर से सावधान करता।

यहाँ ये योरपीय व्यापारी आये। हमने और हमारे बादशाह ने इनका स्वागत किया, इन्हें व्यापार करने की सुविधाएँ दीं। उन्होंने हमसे कुछ सीख लिया हो, हमने उनसे कुछ नहीं सीखा।

जहाँगीर ने गद्दी पर बैठकर न्याय करने के वादे तो बड़े-बड़े किये, परन्तु उससे कुछ करते नहीं बना; क्योंकि अकबर बहुत परिश्रमी था तो उसका यह पुत्र निरा आलसी था। गद्दी पर बैठने के बाद उसने मेहरुन्निसा नाम की एक ईरानी विधवा से ब्याह कर लिया और वह इस नई बेगम के प्रभाव में इतना आ गया कि वही अपने भाई और पिता की सहायता से शासन करने लगी। मेहरुन्निसा

से वह 'नूर महल' हुई, फिर 'नूरजहाँ हुई। जहाँगीर उसके प्रभाव में इतना आ गया कि नूरजहाँ का नाम सिक्कों में भी दिया जाने लगा।

बीवी के वश में होने पर जहाँगीर की बुढ़ापे में काफी दुर्गति हुई। उसके लड़के खुर्रम ने उसके विरुद्ध विद्रोह कर दिया और दोनों को बंदी कर लिया। नूरजहाँ अपनी तिकड़म से जहाँगीर सहित निकल भागी और खुर्रम ने क्षमा माँग ली। यों मुसीबत टल गई। इसके बाद ही वह मर गया। यह भी उसके लिए अच्छा ही हुआ। जहाँगीर के मरने पर उसका पुत्र खुर्रम शाहजहाँ की उपाधि लेकर बादशाह हुआ। शाहजहाँ ने तीस वर्ष तक शासन किया। इतने समय के भीतर बादशाहत की बाहरी शान खूब बढ़ी।

मलका नूरजहाँ

शाहजहाँ ने दिल्ली और आगरा में जो महल बनवाये वे मुगल बादशाहत की शान की याद अभी तक दिलाते हैं। फिर दीवान-ए-आम में अपने बैठने के लिए उसने सोने का एक तख्त बनवाया जिसके पीछे जड़ाऊ सोने के मोर बने हुए थे। इस कारण उसका नाम तख्त-ताऊस (मयूर-सिंहासन) हुआ। बेगम मुमताज महल से उसे

बहुत मोहब्बत थी। अतएव उसकी यादगार में उसने संगमरमर का मकबरा बनवाया जो ताजमहल के नाम से प्रसिद्ध है। इस ताजमहल की गिनती संसार की सुन्दरतम इमारतों में है।

शाहजहाँ

शाहजहाँ की बादशाहत की शान यों और बढ़ी कि अकबर के शासन में दक्षिण की कई सल्तनतें स्वतंत्र थीं। मेवाड़ स्वतंत्र था। अब भारत के सभी राज्य शाहजहाँ के अधीन थे।

बाहरी शान बढ़ी, परंतु भीतर से सल्तनत में घुन लगने लगा। बादशाहत के कर्मचारी घूस लेते थे, अत्याचार करते थे, प्रजा निर्धन होती जा रही थी।

उधर बादशाहत बड़ी होकर निर्बल हो रही थी, इधर हिंदू प्रजा को संत समानता और सेवा के उपदेश दे रहे थे। इस कारण हिंदू संगठित होने लगे थे।

इस बात में दक्षिण के मराठे सबसे आगे आये। जिस वर्ष शाहजहाँ बादशाह हुआ, उसी वर्ष पूना में शिवाजी ने जन्म लिया। शाहजहाँ ने मुगल बादशाहत की शान बढ़ाई। शिवाजी ने मराठी जनता को संगठित किया और उसकी शक्ति बढ़ाई।

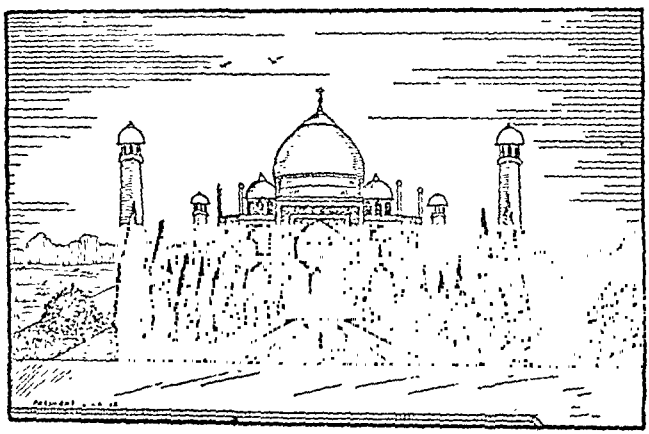

ताज महल

१५

शिवाजी और मराठे

नर्मदा नदी के दक्षिण स्वतंत्र भारत के महाराष्ट्र नामक राज्य में मराठे बसे हैं और इनकी भाषा मराठी है।

महाराष्ट्र में मुस्लिम राज्यों के स्थापित होने पर भी पहाड़ियों में रहने वाले मराठे स्वतंत्र, वीर और परिश्रमी रहे।

मराठों में ये सब गुण तो थे, परन्तु ये संगठित नहीं रहे, इनमें एका नहीं रहा।

पूना के निकट पंढरपुर नामक एक तीर्थ है। यहाँ मराठा संतों की गद्दी है। इस गद्दी पर ऐसे ही संत बैठे जो किसी छोटी जाति में जन्मे थे। ये संत जाति-भेद के विरुद्ध प्रचार करते थे। इसलिए धीरे-धीरे मराठों में समानता का भाव बढ़ गया और वे संगठन करने योग्य हो गये।

ऐसे ही समय मराठों की केंद्रीय भूमि पूना में शिवाजी का जन्म हुआ। शाहजी इनके पिता थे, जीजाबाई इनकी माता थीं। कहते हैं कि एक साधु शाहजी को एक आम दे गया था, यह कहकर कि तुम और जीजाबाई दोनों यह आम खा लो। तुम्हारे एक पुत्र होगा जो शिवजी का अवतार होगा। इसी आशीर्वाद की याद में लड़के का नाम शिवाजी रखा गया।

दादाजी कोंडदेव बालक शिवाजी के शिक्षक थे। जीजाबाई अपने पुत्र को रामायण और महाभारत की कथाएँ सुनातीं, राम

और कृष्ण के आदर्श पर चलने के लिए बालक को उपदेश देतीं। दादाजी कोंडदेव लड़के को कुश्ती लड़ना और अस्त्र-शस्त्र चलाना सिखाता, पंढरपुर के संतों की बानियाँ सुनाता, महाभारत की कथाएँ कहता, भीम और अर्जुन की वीरता की तारीफ करता। शिवाजी पिता की ओर से सीसोदिया वंश का था और माता की ओर से यादव वंश का। जीजाबाई बालक पुत्र को पुरखों की याद दिलातीं। कहतीं, कृष्ण ने कंस के विरुद्ध भारत का उद्धार किया। तुम्हारा काम भी विदेशी अत्याचारियों के विरुद्ध भारत का उद्धार करना है।

शिवाजी

इन शिक्षाओं और उपदेशों का शिवाजी के चरित्र पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा। उन्नीस वर्ष की अवस्था से ही उसने मराठों को संगठित करना प्रारंभ किया और उनकी सहायता से दुर्गों और नगरों पर अधिकार करने लगा।

शिवाजी के पिता शाहजी बीजापुर के सुल्तान के पास नौकर थे। सुल्तान का शिवाजी से बस नहीं चला तो उसने शाहजी को बंदी कर लिया। इस पर शिवाजी ने शाहजहाँ को उसे छुड़ाने के लिए अर्जी दी। शाहजहाँ ने इस चढ़ते जवान को खुश करने के लिए शाहजी को सुल्तान के बंदीगृह से छुड़वा दिया।

छः वर्ष तक शिवाजी चुप रहा। इसके बाद जब बीजापुर के सुल्तान और दिल्ली के बादशाह की लड़ाई छिड़ गई, तो शिवाजी को फिर लूट-मार का अवसर मिला। सुल्तान ने शाहजहाँ से मेल कर लिया और शिवाजी को जीतने के लिए उसने एक सेना भेजी। शिवाजी सेनानायक अफजल खाँ से मिलने गया। अफ़ज़ल ने वार कर दिया, किन्तु अपने हाथ में पहने हुए बघनख से शिवाजी ने अफ़ज़ल को मार डाला और उसकी सेना को भगा दिया।

बीजापुर का सुल्तान इसके आगे शिवाजी को दबाने का साहस न कर सका। उस समय तक औररंगजेब दिल्ली का बादशाह हो गया था। यह बादशाह हिंदुओं को दबाना चाहता था। इसलिए शिवाजी ने उसे तंग करना शुरू किया। औरंगजेब ने शिवाजी को दबाने के लिए एक सेना भेजी। इस सेना का नायक शायस्ता खाँ लूटमार करता पूना पहुँचा और उसी मकान में ठहरा जिसमें शिवाजी का जन्म हुआ था। शिवाजी को वहाँ का कोना-कोना मालूम था। छिपकर वह उस कमरे तक चढ़ गया जहाँ शायस्ता खाँ सो रहा था। शिवाजी तो उसे काट ही डालता, परन्तु शायस्ता को आहट मिल गई और खिड़की से फाँद पड़ा। शिवाजी की तलवार उसकी अँगुलियों पर ही पड़ सकी। अँगुलियाँ कटा कर शायस्ता ने तोबा की और दिल्ली वापस आ गया।

इसके बाद औरगजेब ने जयपुर के मिर्जा जयसिंह को भेजा। जयसिंह ने शिवाजी को समझाया कि लड़ो नहीं, औरंगजेब के पास चलो; हम तुम्हें बहुत ऊँचा पद दिलवा देंगे। शिवाजी झाँसे में आ गया। जब औरंगजेब के दरबार में पहुँचा तो औरंगजेब ने उसे बंदी बना लिया।

शिवाजी को अब स्वतंत्र होने की फिक्र हुई। उसने बहाना रचा कि मैं बीमार हूँ, दान करूँगा। मिठाई के झाबे उसके बंदीगृह से निकलने लगे। इसी प्रकार एक झाबे में शिवाजी बंद होकर नगर के

बाहर पहुँच गया। उसको भगाने वाले लोग तो बाहर लगे ही थे। तेज घोड़ों पर सवार, भेष बदले उसने नर्मदा पार की और महाराष्ट्र पहुँचा। शिवाजी के महाराष्ट्र पहुँचने पर जनता ने उसका धूम-धाम से स्वागत किया। अब उसने स्वतंत्र मराठा राज्य की घोषणा की। रायगढ़ में उसकी राजगद्दी हुई और दिग्विजय करता हुआ वह दक्षिण में तंजौर तक पहुँचा।

इस प्रकार मराठी जनता को जागृत और संगठित करके शिवाजी स्वर्गवासी हुआ।

शिवाजी के मरने पर औरंगजेब ने समझा कि काँटा कटा, अब दक्षिण जीतना सरल होगा। यह उसकी भूल थी। मराठे जागृत थे। औरंगजेब अपने उद्योग में असफल रहा। नब्बे वर्ष की अवस्था में मुगल राज्य को अपने सामने टूटता देखते हुए वह दक्षिण में ही मरा।

मुगल राज्य के टूटने पर मराठे ही भारत के नेता हुए। पचास वर्ष के भीतर मराठों के भगवा झंडे सिंधु नदी के किनारे अटक से उड़ीसा में कटक तक पहुँचे।

परंतु मराठे एक-छत्र राज्य स्थापित न कर सके। वे मुगल राज्य विगाड़ तो सके, परन्तु उसकी जगह मराठा राज्य बना न सके।

शिवाजी की मृत्यु के सवा सौ वर्ष के भीतर मराठा राज्य की स्वतंत्रता समाप्त हुई और मराठे अंग्रेजों के अधीन हुए।

अंग्रेजों की कहानी अभी पुरानी नहीं हुई। उसे भी सुन लो।

१६

अंग्रेजों के चंगुल में

पुरानी बात है, बोलचाल की हिंदी में योरप को विलायत और योरप के रहनेवालों को फिरंगी कहते थे।

औरंगजेब के मरने पर भारतीय तटों पर बसे फिरंगी भारत पर राज्य करने के स्वप्न देखने लगे। योरपीय जातियों में अंग्रेजों और उनके पड़ोसी फ्रांसीसियों की ही होड़ थी। दोनों की लड़ाइयाँ हुईं, भारत में, नई दुनिया में जहाँ आजकल संयुक्तराज्य है और योरप में। सब जगह फ्रांसीसी हारे।

पानीपत की लड़ाई में अफगानिस्तान के अहमदशाह अब्दाली की जीत और मराठों की हार हुई। परंतु अंग्रेजों के सौभाग्य से अब्दाली को अपनी जीत से कोई लाभ नहीं हुआ। अब्दाली के सामने अफगानिस्तान में ही इतनी मुसीबतें आईं कि पंजाब पर सिखों का अधिकार हो गया और दिल्ली तथा आगरा पर मराठे फिर आगये।

उस समय तक अंग्रेजों के पैर भारत में जम चुके थे। बंगाल पर उनका अधिकार हो गया था। देशी राज्यों की फूट से लाभ उठाते हुये, कलकत्ता, मद्रास और बंबई से उन्होंने देश पर अपना अधिकार बढ़ाना प्रारंभ किया। चालीस वर्ष के भीतर अंग्रेजों का दिल्ली और आगरा पर अधिकार हो गया। अंग्रेजों ने मराठों की शक्ति नष्ट की, नेपाल और बर्मा के राजाओं को हराया, सिंध और पंजाब तक देश पर अधिकार किया।

उस समय तक योरप में रेल, तार और पक्की सड़कों के आविष्कार हो गये थे। जब अंग्रेजों ने ये आविष्कार यहाँ भी चालू किये तब हमारे पुरखे बहुत भड़के। अंग्रेजों की भारतीय सेना ने उनके विरुद्ध हथियार उठा लिये। सन् १८५७ में भारतीय स्वाधीनता का प्रथम संग्राम आपसी फूट के कारण असफल रहा; क्योंकि अंग्रेज विलायत से अपनी सेनाएँ ले आये, भारत में सिखों और गुरखों ने उन्हें मदद दी और देशी राज्य अंग्रेजों के भक्त रहे।

तबतक अंग्रेज अपनी एक व्यापारी कंपनी के नाम से भारत पर शासन कर रहे थे। उस समय विक्टोरिया उनकी रानी थी। अब रानी की ओर से भारत पर शासन होने लगा। रानी ने भारतीय प्रजा को विश्वास दिलाया कि हम कोई देशी राज्य नष्ट नहीं करेंगे और धर्म के मामलों में कोई दखल नहीं देंगे। यों भारत पर अंग्रेजों का एक-छत्र राज्य कायम हुआ।

ब्रिटिश साम्राज्ञी महारानी विक्टोरिया

अंग्रेजी राज्य पूरी तरह से विदेशी था। अंग्रेज लंदन से हुकूमत करते रहे। वे यहाँ बसे नहीं, उन्होंने हमारी भाषा नहीं सीखी, हमारा पहनावा उन्होंने नहीं अपनाया। वे पक्के व्यापारी थे, उन्हें धर्म में हस्तक्षेप की खोखली बातों से कोई प्रयोजन न था। उन्हें केवल इस बात से प्रयोजन था कि भारत से

उनका व्यापार बढ़ता रहे, भारत की सहायता से उनकी दौलत बढ़ती रहे। उन्हें इस बात की ही फिक्र थी कि उनके भारतीय राज्य की रक्षा होती रहे। देश में झगड़े-बखेड़े न हों, शिक्षा इतनी ही हो कि यथेष्ट संख्या में उन्हें शिक्षित भारतीय कर्मचारी मिल जायँ। देश की प्रतिरक्षा और भीतरी शांति के लिए रेल, तार और सड़क की जरूरत थी, सेना और पुलिस जरूरी थी। कुछ स्कूल और कालेज भी आवश्यक थे। अतएव इन सबका अंग्रेजों ने बहुत अच्छा प्रबंध किया।

भारत में अंग्रेजी शिक्षा का प्रचार हुआ तो भारतीय भी जनतांत्रिक शासन के पक्षपाती हुए। योरपीय संस्कृति से टक्कर खाकर भारतीय जागृत हुए। रेलें, तार, सडकें, पत्र-पत्रिकाएँ, सबने भारतीय राष्ट्रीयता की भावना पुष्ट की।

इस जागृति के परिणाम-स्वरूप भारत के नेताओं ने उदार अंग्रेज ह्यूम की अध्यक्षता में इंडियन नेशनल कांग्रेस के नाम से एक संस्था सन् १८८५ में कायम की। धीरे-धीरे उसकी शक्ति बढ़ती गई। अंग्रेजों ने उसके जन्म लेते ही उसे कुचला नहीं। फिर जनता की राष्ट्रीय भावना से वह सिंचती रही।

उन्नीसवीं शती के अंत तक यह कांग्रेस यथेष्ट पुष्ट हो गई थी। परंतु तब तक उसने देश को स्वतंत्र कराने का दावा नहीं किया था।

१७

स्वाधीनता की ओर

उन्नीसवीं शती के अंत तक अंग्रेज संसार के नेता रहे। ब्रिटिश साम्राज्य में सूर्यास्त नहीं होता था। बीसवी शती के प्रारंभ से अंग्रेजों की शक्ति घटने लगी।

योरप में जर्मनी की शक्ति बहुत बढ़ रही थी और एशिया में जापान अब रूस से टक्कर लेने योग्य हो गया था। अंग्रेजों को किसी से भय था तो रूस से ही। इसलिए जब रूस तथा जापान की लड़ाई हुई और इस लड़ाई में जापान की जीत हुई तो भारतीय इस जीत से बहुत प्रभावित हुए। मेरी अवस्था उस समय वही थी जो अब तुम्हारी है। जापान की जीत की खबर सुनकर मैं अपने साथियों सहित ऐसे उछलता-कूदता था मानो बाहर किसी युद्ध में भारत की ही जीत हो रही हो।

जापान की जीत से हमारी आशाएँ बंधीं। जापानी एशियाई हैं। वे हमारे देश के गौतमबुद्ध की पूजा करते हैं। यदि वे रूसियों को हरा सके तो हम अंग्रेजों को क्यों न हरा सकेंगे ?

उन दिनों भारत पर अंग्रेजों की ओर से लार्ड कर्जन शासन कर रहा। था। उसने देखा कि कांग्रेस आंदोलन में बंगाली ही सबके आगे हैं। इसलिए उनमें फूट डालने के लिए उसने बंगाल को दो प्रातों में बाँट दिया। उधर जापान की जीत से हमारा जोश बढ़ा, इधर कर्जन ने बंग-भंग किया। तब तक कांग्रेस में बहुत नम्रता थी। अब उसमें

गरमी आ गई। स्वदेशी के आंदोलन ने जोर पकड़ा। कांग्रेस के मंच से दादाभाई नौरोजी के नेतृत्व में स्वराज्य की माँग पेश की गई।

जब जोशीले युवकों ने हिंसात्मक ढंग पकड़ा तो अंग्रेज शासकों ने जनता पर अत्याचार करना प्रारंभ किया। कुछ समझदार अंग्रेज नेताओं ने भारतीय नेताओं को अपनी कानूनी सभाओं में जगहें देकर

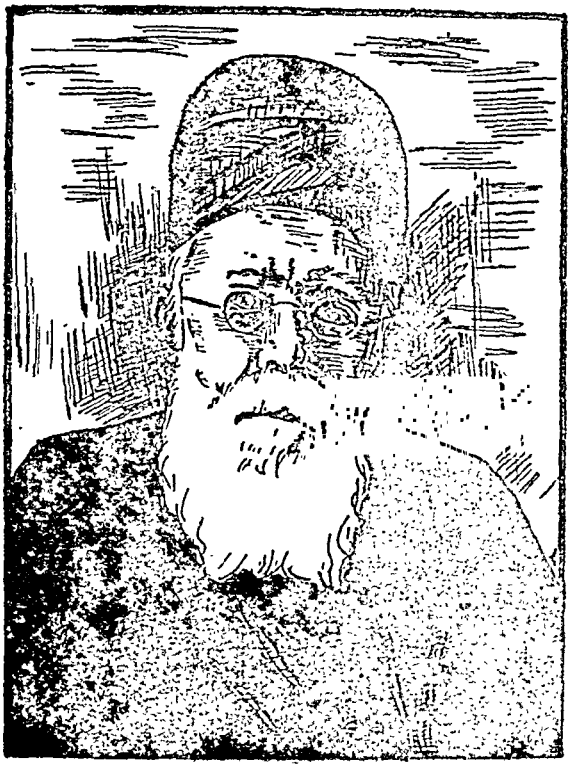

दादाभाई नौरोजी

उन्हें ठंढा करने का प्रयत्न किया। मुसलमानों को उन्होंने अलग अधिकार माँगने के लिए बढ़ावा दिया। यों भारतीय नेताओं में भेद बढ़ गया और आंदोलन की गर्मी कम होने लगी।

इधर स्वराज्य-आंदोलन ठंढा हो रहा था, उधर दक्षिणी अफ्रीका में बसे भारतीयों पर वहाँ के अंग्रेज निवसी अत्याचार कर रहे थे और महात्मा गांधी वहाँ पीड़ित भारतीयों का नेतृत्व कर रहे थे।

ऐसे समय योरप में एक भीषण समर छिड़ गया। यह समर इस-लिये छिड़ा था कि जर्मनी ने बेलजियम जैसे छोटे-से देश की स्वतंत्रता छीन ली थी। भारतीय जनता ने बड़े उत्साह से अंग्रेजों का साथ इस समर में दिया। गांधीजी ने रंगरूटों को सेना में भरती कराया।

कुछ समय से क्रांतिकारी दल के युवक छिपकर हत्याएँ कर दिया करते थे। इन हत्याओं की रोक-थाम के लिए अंग्रेजी सरकार ने एक कानून बनाना चाहा जिससे जनता पर अत्याचार की संभावना थी। भारतीय नेताओं ने इस कानून का विरोध किया परन्तु सरकार ने उसे अपने जोर से बनवा ही लिया।

इस पर जनता में उग्र आंदोलन प्रारम्भ हुआ। गांधीजी ने अभी तक दक्षिणी अफ्रीका में सत्याग्रह के रूप में आंदोलन का नेतृत्व किया था। अब उसी ढंग पर उन्होंने भारतीय आंदोलन हाथ में लिया।

इस समय से गाँधीजी भारतीय जनता के नेता हुए। भारतीय स्वाधीनता की कहानी का दूसरा भाग उनकी कहानी से ही पूरा होता है।

१८

कविवर रवीन्द्र और महात्मा गाँधी

महात्मा गांधी की कहानी के पहले कविवर रवीन्द्र की कहानी कहनी है क्योंकि गांधीजी उन्हें गुरुदेव कहा करते थे।

भारतीय सैनिकों के अंग्रेजी शासन के विरुद्ध हथियार उठाने की बात हो चुकी है। उनके इस असफल उद्योग के चार वर्ष बाद रवीन्द्र नाथ ठाकुर ने कलकत्ते के एक उच्च बंगाली वंश में जन्म लिया।

रवीन्द्र जी घर पर पढ़ाये गये। उन्होंने कोई सरकारी परीक्षा नहीं पास की। घर की जमींदारी थी। नौकरी या व्यवसाय में लगने की आवश्यकता न थी। संगीत और कविता के प्रेमी थे। इसी व्यसन में लग गये।

रवीन्द्र जी ने भारतीय शास्त्रों का अध्ययन किया और जो शांति तथा सत्य का संदेश भारत के कृष्ण और बुद्ध जैसे सपूतों ने सारे संसार को दिया था, उसे अब रवीन्द्र जी ने कविताओं और कहानियों द्वारा दुहराना प्रारंभ किया। पचास वर्ष की अवस्था तक पहुँचकर उन्होंने बँगला में गीतांजलि के नाम से गीतों का संग्रह छपवाया। मित्रों के अनुरोध से उन्होंने गीतांजलि के गीतों का अंग्रेजी अनुवाद भी किया जिस पर उन्हें नोबुल पुरस्कार मिला। वह देश-देश घूमकर सत्य, शान्ति और अहिंसा का भारतीय संदेश पहुँचाने लगे। इस संदेश को साकार रूप देने के लिए उन्होंने बंगाल में बोलपुर नामक स्थान के समीप विश्वभारती नामक विश्वविद्यालय स्थापित किया। यहाँ संसार के बड़े-बड़े विद्वान शिक्षा देने और अध्ययन करने आते हैं।

ऐसे समय योरप में एक भीषण समर छिड़ गया। यह समर
छिड़ा था कि जर्मनी ने बेलजियम जैसे छोटे-से देश की स्वतंत्रता
न ली थी। भारतीय जनता ने बड़े उत्साह से अंग्रेजों का साथ इस
र में दिया। गांधीजी ने रंगरूटों को सेना में भरती कराया।

कुछ समय से क्रांतिकारी दल के युवक छिपकर हत्याएँ कर दिया
रते थे। इन हत्याओं की रोक-थाम के लिए अंग्रेजी सरकार ने एक
कानून बनाना चाहा जिससे जनता पर अत्याचार की संभावना थी।
भारतीय नेताओं ने इस कानून का विरोध किया परन्तु सरकार ने उसे
अपने जोर से बनवा ही लिया।

इस पर जनता में उग्र आंदोलन प्रारम्भ हुआ। गांधीजी ने अभी
तक दक्षिणी अफ्रीका में सत्याग्रह के रूप में आंदोलन का नेतृत्व किया
था। अब उसी ढंग पर उन्होंने भारतीय आंदोलन हाथ में लिया।

इस समय से गाँधीजी भारतीय जनता के नेता हुए। भारतीय
स्वाधीनता की कहानी का दूसरा भाग उनकी कहानी से ही पूरा
होता है।

१८

कविवर रवीन्द्र और महात्मा गाँधी

महात्मा गांधी की कहानी के पहले कविवर रवीन्द्र की कहानी कहनी है क्योंकि गांधीजी उन्हें गुरुदेव कहा करते थे।

भारतीय सैनिकों के अंग्रेजी शासन के विरुद्ध हथियार उठाने की बात हो चुकी है। उनके इस असफल उद्योग के चार वर्ष बाद रवीन्द्र नाथ ठाकुर ने कलकत्ते के एक उच्च बंगाली वंश में जन्म लिया।

रवीन्द्र जी घर पर पढ़ाये गये। उन्होंने कोई सरकारी परीक्षा नहीं पास की। घर की जमींदारी थी। नौकरी या व्यवसाय में लगने की आवश्यकता न थी। संगीत और कविता के प्रेमी थे। इसी व्यसन में लग गये।

रवीन्द्र जी ने भारतीय शास्त्रों का अध्ययन किया और जो शांति तथा सत्य का संदेश भारत के कृष्ण और बुद्ध जैसे सपूतों ने सारे संसार को दिया था, उसे अब रवीन्द्र जी ने कविताओं और कहानियों द्वारा दुहराना प्रारंभ किया। पचास वर्ष की अवस्था तक पहुँचकर उन्होंने बँगला में गीतांजलि के नाम से गीतों का संग्रह छपवाया। मित्रों के अनुरोध से उन्होंने गीतांजलि के गीतों का अंग्रेजी अनुवाद भी किया जिस पर उन्हें नोबुल पुरस्कार मिला। वह देश-देश घूमकर सत्य, शान्ति और अहिंसा का भारतीय संदेश पहुँचाने लगे। इस संदेश को साकार रूप देने के लिए उन्होंने बंगाल में बोलपुर नामक स्थान के समीप विश्वभारती नामक विश्वविद्यालय स्थापित किया। यहाँ संसार के बड़े-बड़े विद्वान शिक्षा देने और अध्ययन करने आते हैं।

रवीन्द्र जी ने उन्नीसवीं शती
थी कि सांसारिक सुख के भूखे योरपीय देश आपस में
होंगे। भारत को शांत रहना है और शांति-मार्ग से ही उसे
तंत्र होना है। रवीन्द्र जी को भारत की स्वतन्त्रता देखनी नहीं बदी
, क्योंकि महासमर चल ही रहा था जब वह ८१ वर्ष की अवस्था
कर स्वर्गवासी हुए।

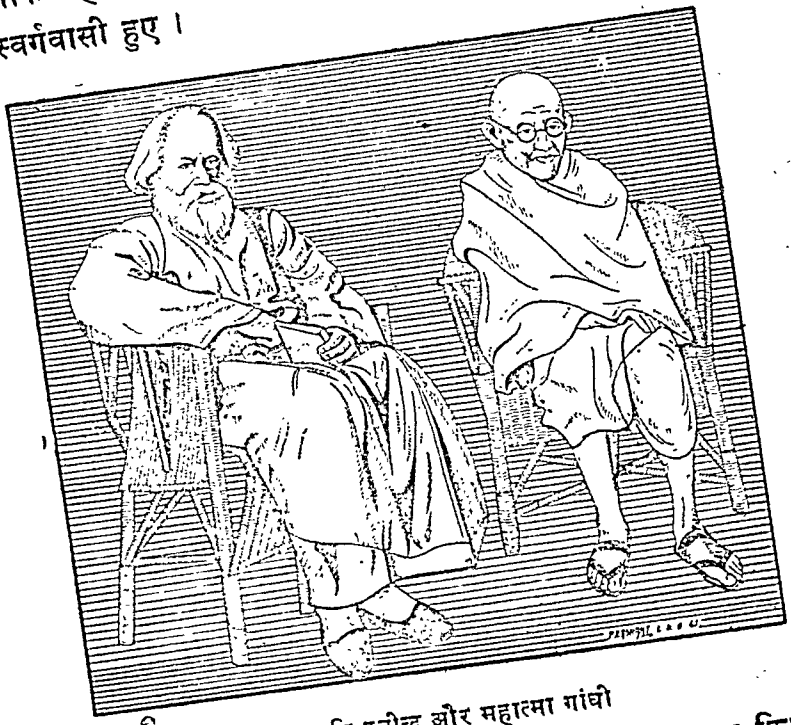

विश्वकवि रवीन्द्र और महात्मा गांधी

रवीन्द्र जी ने भारतीय संदेश का कवि-वाणी से प्रचार किया तो
गांधी जी ने इस संदेश का भारतीय स्वतंत्रता के पक्ष में सफल प्रयोग
किया।

भारत पहुँच कर पहले तो गांधीजी ने चम्पारन के किसानों क
सत्याग्रह के मार्ग में लाकर उन्हें नील के जमींदारों के अत्याचार

मुक्त किया। फिर उनके सामने वे सुझाव रखे जिनसे देश स्वतंत्रता प्राप्त कर सके।

जब अंग्रेजी सरकार ने जनता के नेताओं के विरोध करने पर भी काले कानून बना दिये, तो गांधीजी ने शांतिपूर्ण अवज्ञा का आदेश जनता को दिया। परन्तु अवज्ञा करते हुए शांत रहना बहुत कठिन है। गोरखपुर के निकट चौरीचौरा नामक स्थान पर जब कुछ क्रोधी लोगों ने पुलिस के आदमी मार डाले तो उन्होंने आन्दोलन ही स्थगित कर दिया। ऐसा कर देने पर कांग्रेस के भीतर फूट पड़ गई और सरकार को आंदोलन दबाने का अच्छा मौका मिला, परन्तु वह अपने सिद्धांत पर अटल रहे।

जवाहरलालजी नेहरू के नेतृत्व में कांग्रेस ने सन १९२९ के अधिवेशन में पूर्ण स्वराज्य का प्रस्ताव स्वीकृत किया और २६ जनवरी १९३० को कांग्रेस के नेतृत्व में जनता ने पहला स्वतंत्रता दिवस मनाया।

गांधीजी ब्रिटेन पहुँचे कि किसी प्रकार सरकार से जनहित में कानून बनवा सकें। किन्तु निराश लौटे और बंदी बना लिये गये।

बंदी होने पर जब गांधीजी को मालूम हुआ कि अंग्रेजी सरकार नये शासन विधान में हरिजनों को हिंदुओं के विरुद्ध कर देना चाहती है तो उन्होंने इस योजना के विरुद्ध अनशन प्रारंभ कर दिया। देश के सौभाग्य से हरिजन नेता से पूना में कांग्रेसी नेताओं का समझौता हो गया जिसे अंग्रेजी सरकार ने मान लिया। यों गांधीजी का यह अनशन व्रत सफल हुआ।

सन् १९३७ में स्वराज्य की दूसरी किश्त भारत में चालू हुई। उस समय भारत में ११ बड़े प्रांत थे। गांधीजी के आदेश से आठ प्रांतों में कांग्रेसी शासन चालू हुआ। यह शासन दो ही वर्ष चालू रह

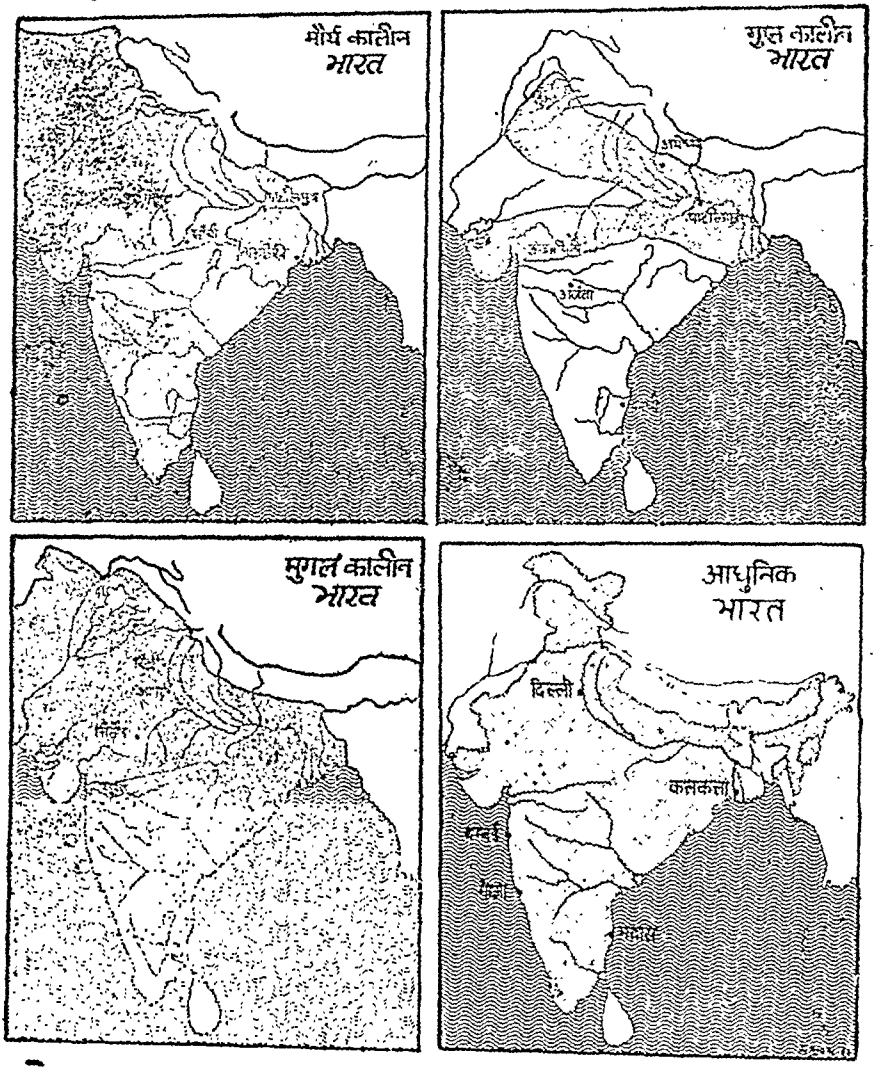

आज से २२०० वर्ष पहले मौर्य काल में अधिकांश भारत को एक छत्र शासन का सौभाग्य प्राप्त हुआ। डेढ़ हजार वर्ष हुए कुछ कम मात्रा में हमें यह निधि गुप्त-काल में मिली। एक हजार वर्ष बाद अधिकांश भारत मुगल छत्र के नीचे आया। परंतु पहली बार ही देश के अधिकांश पर कश्मीर से कन्याकुमारी तक और अरब सागर से ब्रह्मपुत्र के असमी मुख तक शुद्ध स्वदेशी शासन का सौभाग्य हमें प्राप्त हुआ है। इसका मूल्य पहचानो और चुकाओ।

पाया कि दूसरा महासमर छिड़ गया और भारत की अंग्रेजी सरकार भारतीय जनता की सहमति बिना इस समर में सम्मिलित हो गई।

महासमर में अंग्रेजों की हार होती चली गई, जापान ने उनके विरुद्ध लड़ाई छेड़ दी। उसकी सेनाएँ भारत की सीमा तक पहुँच गईं और और जंगी जहाज बंगाल की खाड़ी के अधिकारी हो गये। यों भारत अरक्षित हो गया। तब जनता को स्वरक्षा के लिए तैयार करने हेतु गांधीजी ने अंग्रेजी सरकार से भारत छोड़ने का अनुरोध किया। परन्तु सरकार ने उन्हें अन्य नेताओं सहित बंदी कर लिया। तब देश में इतना घोर आंदोलन हुआ कि अंग्रेजों ने भारत पर शासन करते रहना असंभव समझ लिया।

समर में अंग्रेजों की जीत अवश्य हुई, परंतु उनकी शक्ति बहुत घट गई थी पड़ोसी रूस की शक्ति बढ़ गई थी। इस विशाल राज्य से अंग्रेजों का पुराना बैर था। अंग्रेजी सरकार के अधीन भारतीय सैनिक और पुलिस भी विदेशी शासन से क्षुब्ध हो गये थे। ऐसी दशा में अंग्रेजों ने देश का शासन भारतीय जनता के नेताओं को सुपुर्द करने का निश्चय किया। परन्तु देश के अधिकांश मुसलमान मुसलिम लीग के नेतृत्व में भारत के बटवारे के लिए हठ करने लगे थे। देश में जगह-जगह दंगे होने लगे। तब अंग्रेजी सरकार ने बँटवारे का निश्चय किया। जो भाग भारत से अलग हुआ वह अब पाकिस्तान कहलाता है।

यों भारत की बँटाई और स्वतंत्रता एक ही दिन आयी १५ अगस्त, १९४७ को। देश के बाँटवारे से गाँधीजी को बहुत शोक हुआ। बंटवारे के साथ मार-काट भी बहुत हुई, विशेष रूप से पंजाब और बंगाल में। तब गांधीजी हिन्दू-मुस्लिम वैर शांत करने के उद्योग में लगे। अंग्रेजों के शासनकाल में देश में बहुत से देशी राज्य थे। और सब राज्य तो भारत या पाकिस्तान के साथ हो गये। परन्तु

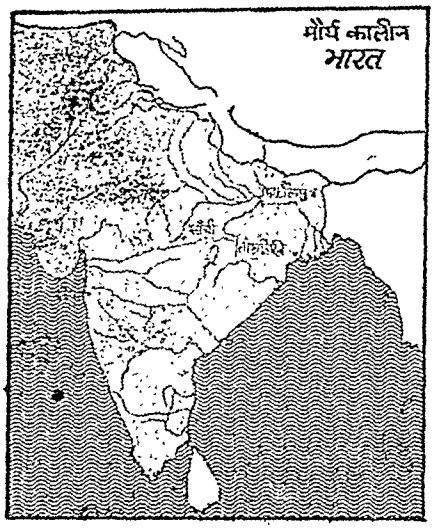

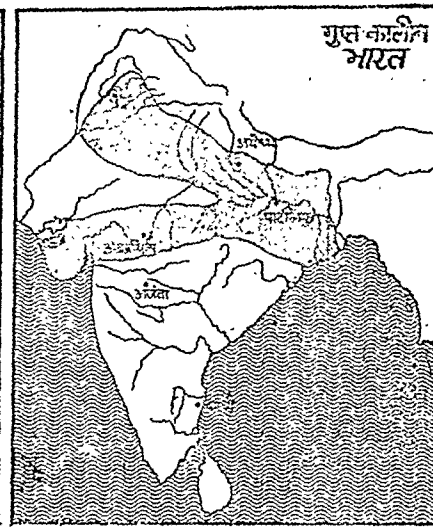

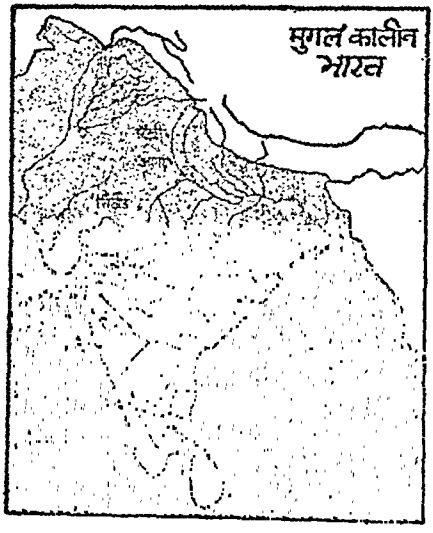

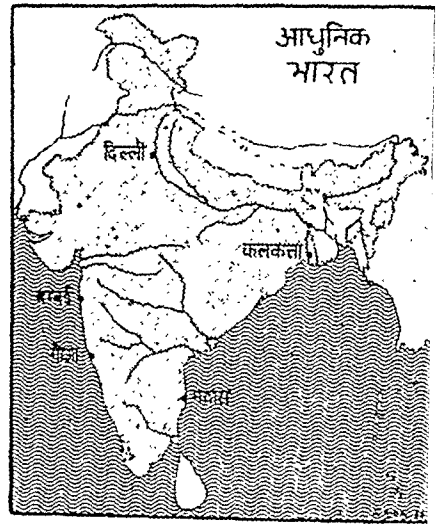

आज से २२०० वर्ष पहले मौर्य काल में अधिकांश भारत को एक छत्र शासन का सौभाग्य प्राप्त हुआ। डेढ़ हजार वर्ष हुए कुछ कम मात्रा में हमें यह निधि गुप्त-काल में मिली। एक हजार वर्ष बाद अधिकांश भारत मुगल छत्र के नीचे आया। परंतु पहली बार ही देश के अधिकांश पर कश्मीर से कन्याकुमारी तक और अरब सागर से ब्रह्मपुत्र के असमी मुख तक शुद्ध स्वदेशी शासन का सौभाग्य हमें प्राप्त हुआ है। इसका मूल्य पहचानो और चुकाओ।

पाया कि दूसरा महासमर छिड़ गया और भारत की अंग्रेजी सरकार भारतीय जनता की सहमति बिना इस समर में सम्मिलित हो गई।

महासमर में अंग्रेजों की हार होती चली गई, जापान ने उनके विरुद्ध लड़ाई छेड़ दी। उसकी सेनाएँ भारत की सीमा तक पहुँच गईं और और जंगी जहाज बंगाल की खाड़ी के अधिकारी हो गये। यों भारत अरक्षित हो गया। तब जनता को स्वरक्षा के लिए तैयार करने हेतु गांधीजी ने अंग्रेजी सरकार से भारत छोड़ने का अनुरोध किया। परन्तु सरकार ने उन्हें अन्य नेताओं सहित बंदी कर लिया। तब देश में इतना घोर आंदोलन हुआ कि अंग्रेजों ने भारत पर शासन करते रहना असंभव समझ लिया।

समर में अंग्रेजों की जीत अवश्य हुई, परंतु उनकी शक्ति बहुत घट गई थी पड़ोसी रूस की शक्ति बढ़ गई थी। इस विशाल राज्य से अंग्रेजों का पुराना बैर था। अंग्रेजी सरकार के अधीन भारतीय सैनिक और पुलिस भी विदेशी शासन से क्षुब्ध हो गये थे। ऐसी दशा में अंग्रेजों ने देश का शासन भारतीय जनता के नेताओं को सुपुर्द करने का निश्चय किया। परन्तु देश के अधिकांश मुसलमान मुसलिम लीग के नेतृत्व में भारत के बटवारे के लिए हठ करने लगे थे। देश में जगह-जगह दंगे होने लगे। तब अंग्रेजी सरकार ने बँटवारे का निश्चय किया। जो भाग भारत से अलग हुआ वह अब पाकिस्तान कहलाता है।

यों भारत की बँटाई और स्वतंत्रता एक ही दिन आयी १५ अगस्त, १९४७ को। देश के बाँटवारे से गाँधीजी को बहुत शोक हुआ। बाँटवारे के साथ मार-काट भी बहुत हुई, विशेष रूप से पंजाब और बंगाल में। तब गांधीजी हिन्दू-मुस्लिम बैर शांत करने के उद्योग में लगे। अंग्रेजों के शासनकाल में देश में बहुत से देशी राज्य थे। और सब राज्य तो भारत या पाकिस्तान के साथ हो गये। परन्तु

मीर पर पाकिस्तान ने जबरदस्ती अधिकार करना चाहा
सके महाराजा ने जनता के सहयोग से भारत के भीतर रहने का
श्चय किया। यों भारत से पाकिस्तान का खुला वैर प्रारंभ हुआ।

गांधीजी देश के भीतर शांति स्थापित करने में बहुत-कुछ सफल
हुए और शासन के पथ-प्रदर्शन में वह लगे थे कि अचानक एक सिर-
फिरे हिंदू युवक ने संध्याकालीन प्रार्थना-सभा के मध्य उनकी हत्या
कर डाली। भारत की पुण्य भूमि पर गांधी जी जैसे अवतारी पुरुष
की हत्या के पाप का भारी कलंक हम पर है।

इस महान दुर्घटना के पश्चात् देश का संविधान बना जिसके
संरक्षण में हम सब ३० जनवरी, सन् १९५० से हैं। तब से पंचवर्षीय
योजनाओं द्वारा देश में गरीबी घटी है और शिक्षा बढ़ी है। परंतु
पाकिस्तान का तब से वैर था ही, अब चीन के दाँत भी हमारे देश
की उत्तरी सीमा पर हैं। गांधी जी को हम अपने राष्ट्र का पिता
मानते हैं, तो तुम्हारा और तुम्हारे माता-पिता तथा शिक्षकों का
कर्तव्य है कि राष्ट्रपिता की सीख की सुगंध सदैव तुम्हारे साथ रहे।

भारतीय स्वाधीनता के प्रतीक

१९

दिनांक १५ अगस्त १९४७ को भारत स्वाधीन हुआ। संविधान के बनने में दो वर्ष लगे। दिनांक २६ जनवरी, १९५० को भारतीय संविधान चालू हुआ। मई १९५२ तक इस संविधान के अनुसार पहले चुनाव पूरे हुए और भारतरत्न डॉ० राजेन्द्र प्रसाद भारतीय गणराज्य के राष्ट्रपति हुए।

हमें समझना है कि भारतीय स्वाधीनता के प्रतीक कौन-कौन हैं? हम अपने देश की स्वाधीनता की पूजा किस प्रकार करें?

सबसे पहले हमें उस अवतारी पुरुष के चित्र को नमस्कार करना है जिसके आशीर्वाद से हम स्वाधीन हुए हैं। गांधीजी की आत्मा राष्ट्रपति से लेकर साधारण नागरिक तक सबका पथ-प्रदर्शन करती रहे--यही हमारी ईश्वर से प्रार्थना है।

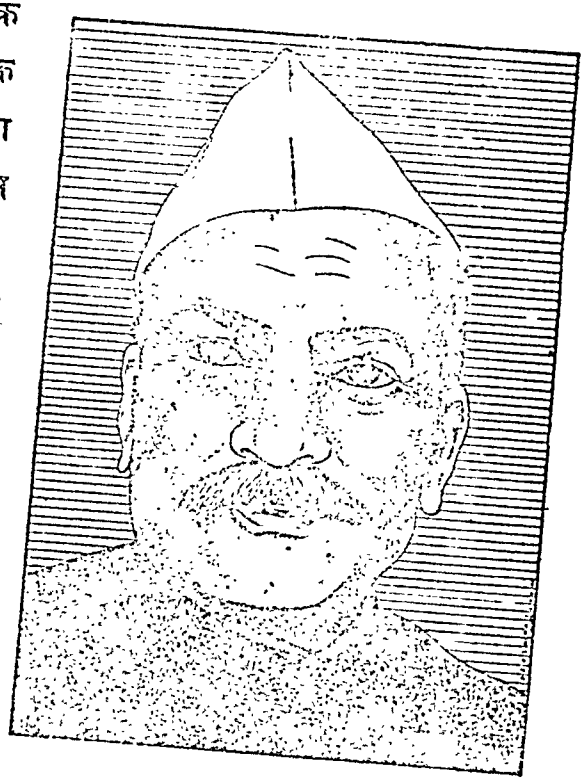

प्रथम राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्र प्रसाद

ांधी जी स्वर्गवासी हैं। देश के राष्ट्र
मानना है। हमारे प्रथम राष्ट्रपति भारतरत्न डॉ० राजेन्द्र
जी के पट्ट शिष्य थे। दूसरे राष्ट्रपति डॉ० सर्वपल्ली राधाकृष्णन
तीय संकृति के सर्वमान्य व्याख्याता हैं। गांधीजी की आत्मा के
वात् हमें अपने राष्ट्रपति को मस्तक नवाना है, उनकी आज्ञा हमें
, मन, धन से माननी है।

अपने राष्ट्रपति के दर्शन तुम्हें कभी-कभी ही होंगे। उनके
अतिरिक्त हमारी स्वतंत्रता के कुछ प्रतीक ऐसे भी हैं जिनका महत्व
हमें समझना है और जिनपर आवश्यकता पड़ने पर हमें अपना सर्वस्व
निछावर करना है।

राष्ट्रपति राधाकृष्णन प्रधान मंत्री जवाहरलाल नेहरू और गांधी जी के मानसपुत्र आचार्य विनोबाभावे

इन प्रतीकों में सबसे ऊपर हमारी राष्ट्रीय पताका है। इ
पताका में तीन पट्टियाँ हैं। ऊपर केसरिया पट्टी है, नीचे गहरे
रंग की पट्टी है, दोनों के बीच सफेद पट्टी है और इस सफेद पट्टी
बीच नील वर्ण का अशोक-चक्र है जिसमें २४ तीलियाँ हैं। इस
का अर्थ हमें समझना है:—

केसरिया रंग साहस और बलिदान का, श्वेत रंग सत्य और अहिंसा का और हरा रंग निष्ठा तथा शक्ति का प्रतीक है। तीनों पट्टियों की पताका का अभिवादन करने पर यह पताका मानो हमें राष्ट्रसेवा में इन गुणों से युक्त होने का निमंत्रण देती है। अशोक चक्र का ऐतिहासिक महत्व है। विश्ववंद्य अशोक हमारे देश के आदर्श सम्राट थे। उन्होंने शक्तिशाली होकर मानव-मात्र को धार्मिक सहिष्णुता, नैतिकता और अहिंसा का संदेश दिया और सारनाथ के सिंह चतुर्भुज से लिया हुआ धर्मचक्र उनके इस संदेश का प्रतीक था। उनका धर्मचक्र हमारी पताका में केन्द्रीय स्थान पाकर उसी प्रकार हमारे स्वतंत्र भारत की राष्ट्रीय नीति का भी पथ-प्रदर्शन करता है।

राष्ट्रीय पताका के सामने जो हमें प्रार्थना करनी है वह हमारा राष्ट्रीय गीत है। कविवर रवींद्र इसके निर्माता थे। गीत इस प्रकार है :—

जनगण मन अधिनायक जय हे, भारत भारत विधाता
पंजाब, सिंधु, गुजरात, मराठा, द्राविड़, उत्कल बंग
विंध्य हिमाचल यमुना गंगा, उच्छल जलधि-तरंग
तव शुभ नामे जागे तव शुभ आशिष माँगे
गाहे तव जय गाथा
जन गण मंगलदायक जय हे भारत-भाग्य-विधाता
जय हे, जय हे, जय जय जय, जय हे॥

यदि यह गीत याद न हो और इसके गाने में कुछ कठिनाई हो तो बंकिमचंद्र चटर्जी कृत वंदे मातरम् भी मान्य है। वह इस प्रकार है:—

वंदे मातरम्।
सुजलां सुफलां मलयज शीतलां

शस्य श्यामला मातरम्

वंदे मातरम्

शुभ्र ज्योत्सनां पुलकित यामिनीम्

फुल्ल कुसमित द्रुमदल शोभिनीम्

सुहासिनीं सुमधुर भाषिणीम्

सुखदां वरदां मातरम्

वंदे मातरम्

जिस प्रकार हमें झंडे और राष्ट्रीय गीत का आदर करना है, उसके नियम इस प्रकार हैं:—

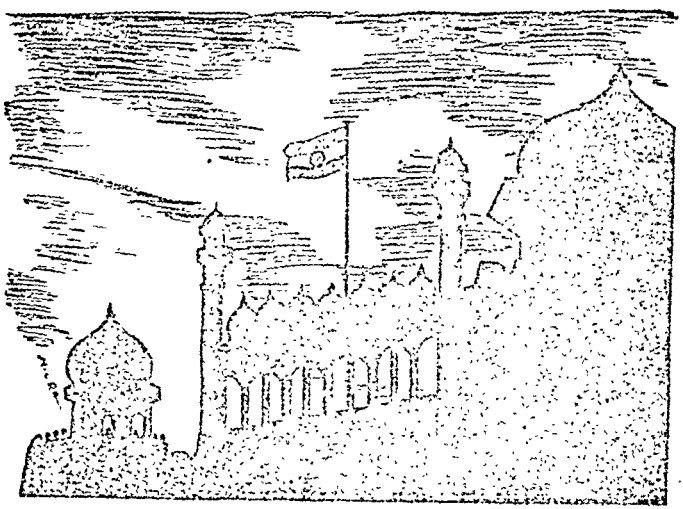

सदियों की दासता के पश्चात् १५ अगस्त १९४७ से दिल्ली के लाल किले पर राष्ट्रीय ध्वज फहराने लगा है।

राष्ट्रीय पताका सभा या भवन के केन्द्रीय भाग के सर्वोच्च स्थान पर फहराई जाय। जिस समय फहराई जाय उस समय सब दोनों पैर जोड़कर एक हाथ से सलामी दो या दोनों हाथों से नमस्कार करो।

जितनी देर तक राष्ट्रीय गान होता रहे उतनी देर तक संयम पूर्वक खड़े रहो। राष्ट्रीय पताका उसी मोटरकार के हुड पर लगी रह सकती है जिसमें राष्ट्रीय शासन के कोई मंत्री बैठे हों। राष्ट्रीय पताका का सर्व सम्मान की जगह ही फहराना उचित है।

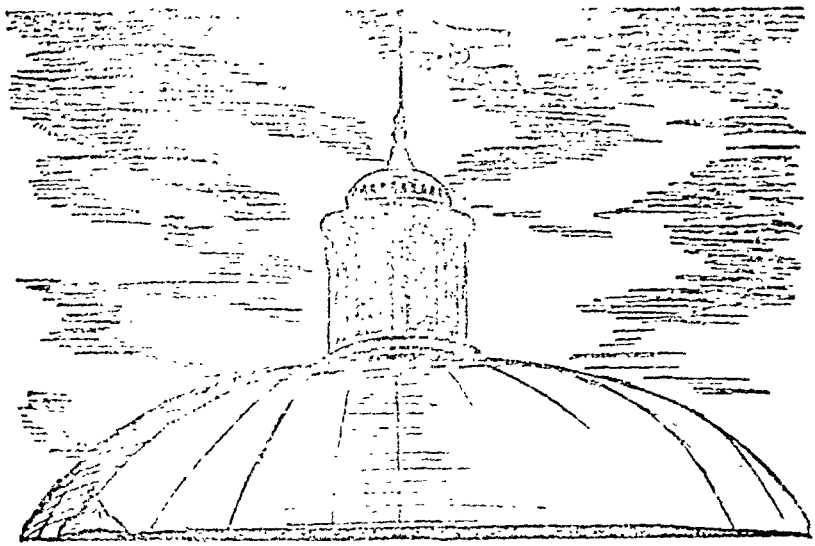

संसद भवन नई दिल्ली पर राष्ट्रीय पताका

राष्ट्रपति, राष्ट्रीय पताका और राष्ट्रीय वंदना के साथ हमें राष्ट्रीय शासन-चिह्न का भी सम्मान करना है। यह है सारनाथ के अशोक स्वयं का सिंह चतुर्भुज शिखर जिसके नीचे उपनिषद् से उद्धृत 'सत्यं मेव जयते' छपा रहता है। यह शासन-चिह्न हमें समझाता है कि हमारा शक्तिशाली शासन (सिंह) सावधानी (सिंह चारों दिशा के प्रहरी हैं) और कर्त्तव्य (धर्म चक्र) के निर्वाह से हमें सुरक्षा और स्वतंत्रता (धर्म चक्र के साथ निर्भय वन्य-पशु) प्रदान करता है; और सत्य ही के सहारे शासन तथा जन को जय मिलती है।